

[illegible]

— ॐ नमो भगवते वासुदेवाय —

Handwritten musical notation for the first system of 'The Rose Tree'. It consists of a single staff with a treble clef and a key signature of one flat (B-flat). The melody begins with a quarter note G4, followed by a quarter note A4, and then a quarter note B-flat4. The notation is written in a cursive, handwritten style.

† ૫૦) — મહુડી શ્રી દેવકંવંડી મથુરાલાલજી — ન લછ (ધાર-મલવા) ગરહ.

३३८) —भाइजी श्री देकचंदजी झानचंदजी-दिगठाण (धर-मालवा) वार्ले.

५०) —भाइज् —कुवरमलजी नहःमलजी जैन की मारफत-रोपड (पंजाब) वाली पांच वइयें.

२५) —भाइजी श्री नवलमलज्जे धेक यादगिर् (हैद्राबद)

भाइजी श्रो रूपचंदजी छगनर मर्जी सचेत वेजापुर (हैद्राबाद)

...

- २९) — भाइजें श्री मूलतानमलजी जसर जजी खं वसर (बिगलेर छवनी
 २०) — भाइजी श्री बगतावरमलजे धाडिबल बगडिबले (हैद्राबाद)
 १०) — भाइजें श्री चौथमलजे मुलतानमलजी, बन्डर-सेरपूर (हैद्राबाद)
 ६) — भाइजी श्री सिरद रमलजी तातेड कुचेर-मारवाड वाले (हैद्राबाद)
 ५) — भाइजें श्री पूनमचंदजे खं वसर-बिगलोरकी छावणे.
 ५) — भाइजें श्री मगनोरमजी रामचंदजे, पडेली, (हैद्राबाद)
 २) — भाइजें श्री देलतरमजे मोतीलालजें मंडे (हैद्राबाद)
 २) — भाइजें श्री मोहनलालजी चन्दूललजी, पाडेली, (हैद्राबाद)
 २) — भाइजें श्री देलतरमजे केशरमलजी तडवड, यादगरे- (हैद्राबाद)
 २) — भाइजें श्री बाबुरमजे शिवसहयमलजे, भरोडवले (हैद्राबाद)

इन सदसहस्रेण तरफ से यह ग्रन्थ उमूल्य भेट कर करत इत हूइ न-इत हू-

अतः प्रत्येक क इच्छक

१७ ०६ दुर्गलल मुद्रण सहस्र जल इमद ज है.

(दक्षिण)

मुद्रण २४४१ दर्जले

पठक गणे ! प्रथम निम्न लिखित उच्छृङ्खल के शुद्धकर फिर रत्न मे लिखे

पृष्ठ.	ओली.	अशुद्ध.	शुद्ध.	पृष्ठ.	ओली.	अशुद्ध.	शुद्ध.
१.	४	वक्ष	वक्षे	३४	१	वीच	नीच
३	१२	स्वप्न	स्वप्न	" ३५	५	मन	मान
५	११	तोय	श्रेयकार	३६	५	कर्मरे	कर्मरे
१५	१२	कथे	कथे	" ३६	५	पउड	पडह
२२	"	लाज्यो	लेजे	" "	८	"	"
२५	५	ओले	ओलि	" ३६	९	कर्मरे	कुर्मरी
"	११	मुझ	मुझ	" "	६	माधिवक	म धिक्क
२६	"	अत लिख	अन्तलिख	" ३७	१२	खेउ	खेड
२७	६	खा ती	कहाँथी	" ४०	१	पउ	पड
३१	४	मांड	मांड	" ४१	"	जमउ	जमउ
"	१०	कोड	कोड	" ४३	"	सहि	सहि १०
"	११	होउ	होड	"	५	बडती	ढली
३२	४	से	०	"	१२	भर	भइ

नयनां श्रुत
हर्षनन्द
धवे पछे
आया
आरीसे
नम दीपे
पुक्ति
यहां
अजने
०
संकीर्ण
थवे
कयो
मंहेरे
०
मने

मेमांश्रुत
मषे स्यन्द
पछे
अव
अदि से
नम दीये
युत्ति
वहां
अजने
मेहल
संकीर्ण
थवे
कये
मंहेरे
४
मन

२ ४ ९ १ ८ ॥ ८ १२ ९ ८ ११ ९ ९ ८ ॥ १० ५

७७ ७८ ७९ ८० ॥ ॥ ॥ ॥ ८३ ८४ ८८ ८९ ९० ९२ ९३ ॥ ९४

० पेहुं मै थरे
तण पमस्यु
लग केहे
तनुज
सम पछे
भणी
नणद
दिद्य
अण्णे
केहे
तजे
गगन
युगत्रिय

प्रम पेहुं प्यारे
तण पामस्यु
लग केहे
तनुना
मय पछे
भगि
नणद
विदर
अखणु
देव
तज
मगन
युगन्दित्रिय

४ २ १ ३ ७ १२ ९ ५ ९ ८ ९ ९ ५ ७ ५ १ ८

४४ ४५ ४६ ॥ ४७ ४८ ५२ ५५ ६१ ६२ ६५ ६६ ६७ ॥ ६८ ६९ ७२

९४	८	कर राय	फरराय	११५	१०	स्यात	स्थान
"	१२	मध्यरथी-	मध्यवजारथी	१२१	६	आशा	अज्ञ
९५	२	आय	आया	१२८	६	द्रढाई	द्रढाई
"	७	खेचपत	खेचरपत	१३१	२	ये जते	अजते
९६	३	तेपीया	तेपीया	"	५	। ठेर	आंकडी
"	९	मणोद्र	मध्यस्त	"	६	नेठा	नेठा
९८	८	जय	०	१३२	१	कहो	कहां
९९	३	जयधीर	नयधीर	"	९	करसो	फरसो
१०५	६	तंघ हुवा	संग हुवा	१३३	१	आये	अपे
१०६	५	नक्र	नाक	"	६	यह	०
१०९	९	परमानन्दो	परमानन्दी	१३४	१	१ ?	१ ?
"	१०	शेशे	रोशे	"	२	पाय	पप
११०	१	ताक	ताको	"	६	णाश्चर्य	अश्चर्य
१११	"	लाय	लाया	"	६	द्रढ	०
११२	११	सार्चि	सार्चे	"	७	के	०
११३	"	भराइ	भरमाइ	१३५	"	मिती	मिल्
११५	२	इहायो	इहापो	"	"	रेल्या	देख्य-

१३६	१०	दोते	टोली	११	हंभी	हंभे
१३८	३	वक	वक्त	१२	मुझसे	मुझने
"	६	घणा	घणी	८	यर	यह
"	९	राणी	राणी	११	यतावुं	बनवुं
१३९	९	मठ गावु	मैठगवूं	१०	रहनी	एहनी
"	११	क्रा	का	१२	रेष	देष
१४०	२	खेदाश्वर्य	खेद श्रृं	१०	रक	करं
"	७	ब्रह	ब्रह	८	तू	०
"	७	रहे	रहै	६	शख	शक्ति
"	८	मुगे	मनुष्य	८	भगिबे	भोगिबे
१४१	२	चेतवती	चेतवत	८	रिति	परिणति
"	१२	हार	हम	६	य	य
१४२	३	धिमोय	विगेय	८	हुंकर	हुंकर
१४३	५	देख	देहे	१०	और	०
"	६	स्थनक	स्थनके	१०	अरोहित	रेहित
१४४	५	नश	नश	६	हैइ	हैइ
१४५	१०	राजक	रतक	९	मर	म
"	"	रदन	रदके	२		
						उल्लङ्घि.

[illegible]

[illegible]

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२ २३ २४ २५ २६ २७ २८ २९ ३० ३१ ३२ ३३ ३४ ३५ ३६ ३७ ३८ ३९ ४० ४१ ४२ ४३ ४४ ४५ ४६ ४७ ४८ ४९ ५० ५१ ५२ ५३ ५४ ५५ ५६ ५७ ५८ ५९ ६० ६१ ६२ ६३ ६४ ६५ ६६ ६७ ६८ ६९ ७० ७१ ७२ ७३ ७४ ७५ ७६ ७७ ७८ ७९ ८० ८१ ८२ ८३ ८४ ८५ ८६ ८७ ८८ ८९ ९० ९१ ९२ ९३ ९४ ९५ ९६ ९७ ९८ ९९ १००

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥
 श्रीकृष्णाय नमः ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥
 श्रीकृष्णाय नमः ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १२ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १३ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १४ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १५ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १६ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १७ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १८ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १९ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २० ॥

[illegible]

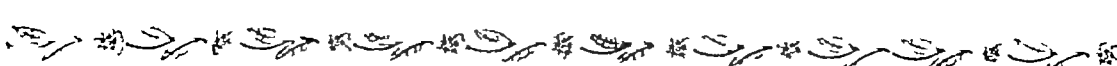
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

१८ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १८ ॥
 १९ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १९ ॥
 २० ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २० ॥
 २१ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २१ ॥
 २२ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २२ ॥
 २३ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २३ ॥
 २४ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २४ ॥
 २५ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २५ ॥
 २६ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २६ ॥
 २७ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २७ ॥
 २८ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २८ ॥
 २९ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २९ ॥
 ३० ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३० ॥



ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १२ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २० ॥



[illegible]

[illegible]



ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

[illegible]

[illegible]

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १२ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २० ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

करार रे ले पु० १४ । जय भोइने जर, विसरे नहैं दीए २ चिसे झुइरे
 ले । उर रे हेवी भुन्य लखइ पाए रक्षा फसे फरइरे ले पु० १५ पु०
 ताँ एरे प्रउ रे पले । नीति ग्रामे चलैरे ले सज्जन उन न दए है सुहरे
 दुशना रे न ललेरे ले पु० १६ निज राज में हिंस बन्ध करइ कु-
 रीउ दूर मिटइरे ले । न्दर चाले ने सहने बलाइ गे सुख करि प्रज-
 तइरे ले पु० १७ दान शाल विद्या शाल स्याइ इन अल्य की
 धइरे ले के लखइ ल धर्म र ल धी । कीति विश्व फलइरे ले पु० १८ ।
 पुगल मन उ रे संति पइ पुनः रे पुगल न लइइरे ले पुगल की
 छिइइइ पुगल मदइ सुख दाइरेलो पु० १९ रे होइइइ मद सुख
 नहि छिउयउ रज ल एइरेले समन्त उत्तरे ठ ल यह सम-
 जने लखइइरे ले पु० २१ देह उरउरे नही ऊर लिखि चिहे देख
 रह विरति बंधव भू हुवे लखि हुइरे ले इत्यन्त १ ए इच्छे

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १२ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २० ॥

अति लोभ दुःखदय है जी । न लीजे कोई को छोड़ । श्र० । १६ ।
 इम कहैं ते भगवदजी । अइ कुमरजी पास । अन्तर नहीं जाए वरि । तेस
 नव अकरत विलस । श्र० २० । सुसंयोज्य पुराय लहेउ । लेभे मूलहे
 जय अरु ल अमोलकेजी । जे वो अका का उपरा श्र० २१ ।
 * देहा । अकने लगे भूढे लेभ तए विकराल । वरुन कहै दु
 को पूछ कहैं से दे मल । १ । अग्रह अति जलित के । एकद अरसर
 जोग ललबइ पूछे जय भणी । परमावो गुप्त नेद । २ । इच्छित वरु
 नल दते । जे अगे हम संय कहैं से लावो स्वर्ग । स्वर्ग दे परनर
 ३ । विजय सुनि कित बिनवे । जे राखूं में अियाय । तो ते भं पडे ते
 खे यह दुःखदय । ४ । गुन कहवैं नहीं केइने । नारी ने ते विरे । उपर
 केइ उते रह नीति निरेर । ४ * इलेक न अमर टिक रहै ।
 गह सिएं चरेप्रत । तरे तथ पि मरेच । इवमं विन उर । १ *

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

६. छुटल ० नहि मुनि मुनि के तब तइ दिन तेन छिनि ॥ १० ॥ तब मुनि
 मुनि के हथ न लगे उन ॥ ७ ॥ कलनर ते मये उदरि ते
 मुनि न ॥ नमलर गिग मणि न पइ ॥ ब्रह्म तय ॥ ८ ॥
 मन्म मन उक्क मुम छलर ॥ ९ ॥ तने मे नैह पार ॥ मणि हरी कंकर ॥ १० ॥
 यहं कीयो मुम निरस ॥ ११ ॥ तने तने तने ॥ १२ ॥
 करि रस ॥ इए ते मणि लेइ मुम छे ॥ १३ ॥ करि ॥ १४ ॥
 १० ॥ उर उरि उरि ॥ १५ ॥ तने ॥ १६ ॥ तने ॥ १७ ॥
 ११ ॥ तने ॥ १८ ॥ तने ॥ १९ ॥ तने ॥ २० ॥
 उर ॥ २१ ॥ तने ॥ २२ ॥ तने ॥ २३ ॥ तने ॥ २४ ॥
 १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥
 २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥

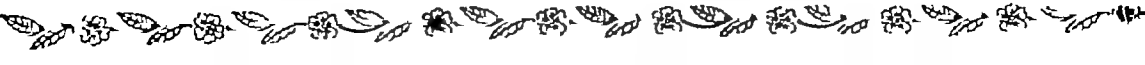
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 श्रीकृष्णाय नमः ॥ २ ॥
 श्रीगुरुभ्यो नमः ॥ ३ ॥
 श्रीगणेशाय नमः ॥ ४ ॥
 श्रीविष्णवे नमः ॥ ५ ॥
 श्रीशिवाय नमः ॥ ६ ॥
 श्रीब्रह्माय नमः ॥ ७ ॥
 श्रीमहादेवाय नमः ॥ ८ ॥
 श्रीनारायणाय नमः ॥ ९ ॥
 श्रीरामाय नमः ॥ १० ॥
 श्रीलक्ष्मणाय नमः ॥ ११ ॥
 श्रीसुग्रीवाय नमः ॥ १२ ॥
 श्रीहनुमताय नमः ॥ १३ ॥
 श्रीकालिकाय नमः ॥ १४ ॥
 श्रीदुर्गाय नमः ॥ १५ ॥
 श्रीकामाक्ष्याय नमः ॥ १६ ॥
 श्रीललाटे नमः ॥ १७ ॥
 श्रीचण्डिकाय नमः ॥ १८ ॥
 श्रीवैद्येश्वर्याय नमः ॥ १९ ॥
 श्रीशंकराय नमः ॥ २० ॥
 श्रीमहाशिवाय नमः ॥ २१ ॥
 श्रीगणेशाय नमः ॥ २२ ॥
 श्रीविष्णवे नमः ॥ २३ ॥
 श्रीशिवाय नमः ॥ २४ ॥
 श्रीब्रह्माय नमः ॥ २५ ॥
 श्रीमहादेवाय नमः ॥ २६ ॥
 श्रीनारायणाय नमः ॥ २७ ॥
 श्रीरामाय नमः ॥ २८ ॥
 श्रीलक्ष्मणाय नमः ॥ २९ ॥
 श्रीसुग्रीवाय नमः ॥ ३० ॥
 श्रीहनुमताय नमः ॥ ३१ ॥
 श्रीकालिकाय नमः ॥ ३२ ॥
 श्रीदुर्गाय नमः ॥ ३३ ॥
 श्रीकामाक्ष्याय नमः ॥ ३४ ॥
 श्रीललाटे नमः ॥ ३५ ॥
 श्रीचण्डिकाय नमः ॥ ३६ ॥
 श्रीवैद्येश्वर्याय नमः ॥ ३७ ॥
 श्रीशंकराय नमः ॥ ३८ ॥
 श्रीमहाशिवाय नमः ॥ ३९ ॥
 श्रीगणेशाय नमः ॥ ४० ॥

[illegible]

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १२ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १३ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १४ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १५ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १६ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १७ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १८ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १९ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २० ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

[illegible]



४३
ज० दि०

[illegible]

२४

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

४५
ज०दि०

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १२ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २० ॥

१. निन्दक नै-नि नै-रहं मदिज गुण ल देवेरि ॥ १ ॥
 २. मदि हेर देरि अरि क वनके विररि म कुर हुं कुर कुर ॥ २ ॥
 ३. ममि अरि लहे इण-ह अरि नै-मरि म १ ॥ १ ॥
 ४. मकु न विरल उर मर नै-देखे ठर रहे मर लर ॥ ३ ॥
 ५. अरि निहं अरि तर उ कटि अरि कुर उर उर ॥ ४ ॥
 ६. अरि नै-अरि विरि म ३ मर नै-अरि विरि ॥ ५ ॥
 ७. अरि नै-अरि अरि मर मर नै-अरि लर अरि ॥ ६ ॥
 ८. अरि नै-अरि अरि मर मर मर मर मर मर मर ॥ ७ ॥
 ९. अरि नै-अरि अरि मर मर मर मर मर मर मर ॥ ८ ॥
 १०. अरि नै-अरि अरि मर मर मर मर मर मर मर ॥ ९ ॥
 ११. अरि नै-अरि अरि मर मर मर मर मर मर मर ॥ १० ॥
 १२. अरि नै-अरि अरि मर मर मर मर मर मर मर ॥ ११ ॥
 १३. अरि नै-अरि अरि मर मर मर मर मर मर मर ॥ १२ ॥
 १४. अरि नै-अरि अरि मर मर मर मर मर मर मर ॥ १३ ॥
 १५. अरि नै-अरि अरि मर मर मर मर मर मर मर ॥ १४ ॥
 १६. अरि नै-अरि अरि मर मर मर मर मर मर मर ॥ १५ ॥
 १७. अरि नै-अरि अरि मर मर मर मर मर मर मर ॥ १६ ॥
 १८. अरि नै-अरि अरि मर मर मर मर मर मर मर ॥ १७ ॥
 १९. अरि नै-अरि अरि मर मर मर मर मर मर मर ॥ १८ ॥
 २०. अरि नै-अरि अरि मर मर मर मर मर मर मर ॥ १९ ॥

Handwritten musical notation in Devanagari script, consisting of multiple staves with notes and lyrics.

दिने ते एक गा इन्हें अठेर ५० १६ दूर ००० भाँ रह
 मंते ते दिन रत ६ मिश्र नह धूरि हे ५० १७
 अहं जल इह पा का में, दुमै ००० को को मे
 मह अइ अकत ५० १८, इह स च सुग विमये अति मे ५० १९
 छूटि अंग अइह छे. उ मरि मरे कुमर न अरे तल में ५० २०
 पति पते दूर अरित पित सहेत पाय; धर्म को धर्म प्रसद से उ सहते उर
 बल ५० २०। मणि अइह गइ पुनः मिलि उ अरति अति हरि गुण
 जल दूरि ००० तल तेरे अमलक तूर ५० २१, ००० देह
 के प्रसद के दुःख नही देह लगर सर हुवे जिरा ताँ वस्तु पार शेर-
 का १ उ अरि पति के दुःख क काँ हेर मेहि करि गुण वन
 २ सुख काँ के अरि २ न कले के अमन से ल उरि हे दुःख र
 ३ काँ के अरि लखे नह अइह गि अइह ३ हति हे अति न

[illegible]

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १२ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २० ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

कैंने उठि ए दुह । ३ " छउव नति करार की ! छिन्न आगे गुण
 यह नैन छनैल है चिर नै लउये नगुण ॥ ४ " बेलख भे ललटे नह
 उदर मुह दौग लउ छउ छिन्न नै लउये कीजे कैंने छन भोग ५
 छल १४ वी । वडो छिन्न सो पडउ ॥ गृहं । लडे नर बचन को निमते
 है । लडे नरं " गुणवन्त ते नान कहै । अलख लख पके टेर छन
 भंन नै दूर भंन होतै परति नह गृही । छिन्न प्रति अमन नै नै ते सुन
 लख छह लउ १ । कन्ये का संविर प्रभए , पति मिलये यह छह
 नल नह नै छे जिम यह होत बसे छह लउ ॥ २ " छउर होइ नै
 लल छन पर लउे । नह ते नै छउं जिअ सुनै न न का छिन्न
 लउे लउ ३ । नानि छि छुल हो रहै हं न नह नै छिन्न
 न नै ते ते छे छह छिन्न ते छे लउ ४ । लल छन का छिन्न
 न नै ते ते छे छह छिन्न सुभने न न का नह नै

ਨਾ ਭਭ ੫ ਸੇ ਤੁਮ੍ਹਰੀ ਹੀਯ ਭ੍ਰਮਿ ਦੇ ਸਿੰਘ ਕੀ ਫੀਰ ਫਿਰੀ ਫਿਰੀ
 ਚਰਖ ਚਰਖ ਭਰਮੁਰ ਭਿਯ ਕੀਤ ਭਭੰ ੬ ਚਾ ਕਰੀ ਭਾਗ ਚਰਖੀ ਦੇ
 ਚੁੰ ਸੁਮ ਦੇਰੇ ਭਭੀ ਕਰ ਦੇ ਰਹੇ ਕਰੇ ਦੇ ਭਾ ਰੁਖੇ ਲੇਖੇ ਭਭ ੭
 ਸਮਰ ਪਰਚ ਭਾਗੀ ਚੇਲੇ ਦੇ ਸਹਾ ਨ ਚਾ ਰੁਖੇ ਫੁਲ ਕਾਗ ਸੁਮ ਨ ਕਾਹੇ
 ਦੇ ਸਰ ਚਾ ਚੁਰ ਪਾਏ ਭਭ ੮ ਸੁਨਰ ਸੁਮ ਦੇ ਰਹੇ ਨ ਚਾ ਕਾਗ
 ਸਰ ਚਾਗੇ ਚਰਖ ਦੇ ਭ ਭਾਗ ਕੇ ਚਿਰੀ ਦੇ ਨਾ ਪਾਏ ਭਭ ੯
 ਸਮਰ ਪਾ ਚਾ ਚਾ ਫੁਲੇ ਦੇ ਸਾਧੇ ਚਾ = ਫੁ ਫੁਲ ਲੇਖੇ ਦੇ ਪਾਗੁ ਨ ਹੋ ਚਿਕਰ
 ਚਾ ਚਾ ਰੁਖ ਭਭ ੧੦ ਚਰਖ ਚੁਰ ਦੇ ਸੁਮ ਚਰਖ ਕਾ ਸਰ ਭਭੀ ਪਾ-
 ਸਰਖ ਚਾ ਚਾ ਰੁਖ ਦੇਖੇ ਚਿਯੋਧੀ ਚਿਯਰ ਭਭ ੧੧ ਚਲੇਕ
 ਚਿਯਰ ਗਾ: ਰੁਖੀ ਨਾ ਚਾ ਗਾਧਰ ਚਿਯਰ ਚਾ ਗਾਧਰ ਗਾਧਰ ਚਾ
 ਗਾਧਰ ਚਿਯਰ ੧ ਚਾ ਚਾ ਗਾਧਰੀ ਚਿਯਰ ਚਾ ਚਾ ਚਾ ਚਾ
 ਚੇਲੇ ਚਾ ਸਾ ਗਾਧਰ ਚਿਯਰੀ ਚਾ ਚੇਲੇ ਚਾ ਚੇਲੇ ਚਭ ੧੨ ਚਿਯਰ

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १२ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २० ॥

[illegible]

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १२ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २० ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 श्रीकृष्णाय नमः ॥ २ ॥
 श्रीगुरुभ्यो नमः ॥ ३ ॥
 श्रीगणेशाय नमः ॥ ४ ॥
 श्रीविष्णवे नमः ॥ ५ ॥
 श्रीशिवाय नमः ॥ ६ ॥
 श्रीब्रह्माय नमः ॥ ७ ॥
 श्रीमहेश्वराय नमः ॥ ८ ॥
 श्रीनारायणाय नमः ॥ ९ ॥
 श्रीरामाय नमः ॥ १० ॥
 श्रीलक्ष्मणाय नमः ॥ ११ ॥
 श्रीसुग्रीवाय नमः ॥ १२ ॥
 श्रीहनुमताय नमः ॥ १३ ॥
 श्रीकालिकाय नमः ॥ १४ ॥
 श्रीदुर्गाय नमः ॥ १५ ॥
 श्रीकामाक्ष्याय नमः ॥ १६ ॥
 श्रीललाय नमः ॥ १७ ॥
 श्रीपद्मिन्याय नमः ॥ १८ ॥
 श्रीशारदाय नमः ॥ १९ ॥
 श्रीवसुधाय नमः ॥ २० ॥
 श्रीसुधाय नमः ॥ २१ ॥
 श्रीमध्याय नमः ॥ २२ ॥
 श्रीसुखाय नमः ॥ २३ ॥
 श्रीसुखाय नमः ॥ २४ ॥
 श्रीसुखाय नमः ॥ २५ ॥
 श्रीसुखाय नमः ॥ २६ ॥
 श्रीसुखाय नमः ॥ २७ ॥
 श्रीसुखाय नमः ॥ २८ ॥
 श्रीसुखाय नमः ॥ २९ ॥
 श्रीसुखाय नमः ॥ ३० ॥

۱۵۳

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

[illegible]

[illegible]

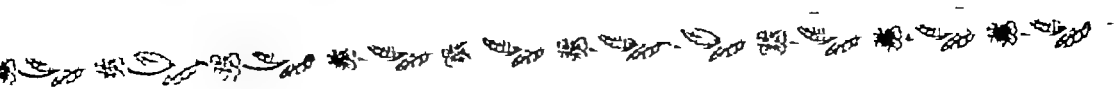
संयोग मे कौन नही हर्षित । ५ ॥ उत्तमोत्तम लयाय पुर वेषे मिल दमति सुखे
 होर रहे सुख मे उरउत इहे हिये धर्म कथा सुखे लोच । ६ ॥
 २० ॥ दल लल ललन की यह । पुगारइ उरउतीकी सुखे २ हे भविका
 चित लर पुगार डेर । तिए अदमर पधारियाजी उरउत बर ममर
 काँला करार गुण मगरुति सुनिवर बहु परिवर । २० ॥ ननलक मर
 होर केउ रउ श्रम मे अरु दे बधइ सुनि अरु चउर सुखि सब अति
 हर्षित । २० ॥ २ मरु मरुइ रउउती ले मं मेन सुउतन । २६ ॥ अ
 मनिवर भणिउ । ते हे बहु पुरउत । २० ॥ ३ परिद वैठि भरउके उ
 उर तए सुनि रउ वरुई धर्म उरदेरने उ अहे सुखे भरु चर लर
 २० ॥ ४ अदिल अमन संसर मे मिले मरलर । २० ॥ परिवर देए
 मंगार शरीर रह उ मरुउ हे जिमे हे । चितार । २० ॥ पुगार संवर
 निर मरुके पुगार छुटे विरलर । पुगार अहे सुखाए कोरे । अउर मर

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४४ ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४४ ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४४ ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४४ ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४४ ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४४ ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४४ ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४४ ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४४ ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४४ ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

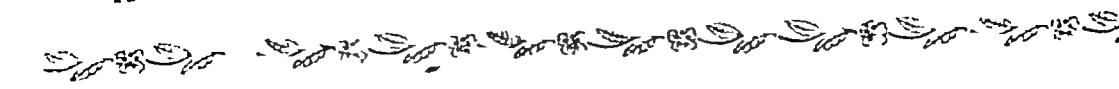
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

१. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 २. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ३. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ४. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ५. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ६. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ७. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ८. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ९. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 १०. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥
 ११. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥
 १२. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १२ ॥
 १३. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १३ ॥
 १४. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १४ ॥
 १५. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १५ ॥
 १६. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १६ ॥
 १७. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १७ ॥
 १८. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १८ ॥
 १९. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १९ ॥
 २०. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २० ॥

१३ ' देखे जेह म ह उजं भर ह । उ पछा चरणं मभारी उर १४
 उठ ह जग हृदय से भीडय गळ प्रेमरत गुलरी जय । १५ नै-श्रुत कहि
 अचिनरु गगः राजी में दुःख पयं ऊपर १६ ऊर ऊर ऊर ऊर
 मुझ ने कीने अ ह सन्मुख दर लरी ऊर १७ ' देने अ लठ हुं कहि
 गुर पद नी शरीर म शोभतरी जय । १८ मर पने के चल २६
 वर के छत्र शीश चमर तुलरी ऊर । १९ सहकरे नीने मेह वरुन
 रोम गगनि सिद्ध व हरी । जग २० ' ऊर नेहल में राज मने सिंहा-
 सा दूनि देने बैठरी ऊर । २१ सुखि २ देने रहे एक नष्टने लहु कुरु
 अनुद मभारी जय २२ बेह म नि तुष्ट जगज उतर पद ना ऊर
 तस नमर पदरी जय । २३ नि अन्न रहे मुख मेगे इच्छित नज दिहू के
 संभरी ऊर २४ ठल इक्षरी ग इ अ-लक पुरा पल नद मुदक-
 ऊर २५ एअद उतर नरुज सुख मेर के नर सुत



४
 ५
 ६
 ७
 ८
 ९
 १०
 ११
 १२
 १३
 १४
 १५
 १६
 १७
 १८
 १९
 २०
 २१
 २२
 २३
 २४
 २५
 २६
 २७
 २८
 २९
 ३०
 ३१
 ३२
 ३३
 ३४
 ३५
 ३६
 ३७
 ३८
 ३९
 ४०
 ४१
 ४२
 ४३
 ४४
 ४५
 ४६
 ४७
 ४८
 ४९
 ५०
 ५१
 ५२
 ५३
 ५४
 ५५
 ५६
 ५७
 ५८
 ५९
 ६०
 ६१
 ६२
 ६३
 ६४
 ६५
 ६६
 ६७
 ६८
 ६९
 ७०
 ७१
 ७२
 ७३
 ७४
 ७५
 ७६
 ७७
 ७८
 ७९
 ८०
 ८१
 ८२
 ८३
 ८४
 ८५
 ८६
 ८७
 ८८
 ८९
 ९०
 ९१
 ९२
 ९३
 ९४
 ९५
 ९६
 ९७
 ९८
 ९९
 १००



तेहनेउं कांइ अहे २ सुट प्रथम । ग्राह्य अ १ पक्षगति वाअर की दु-
 जान सु० १२ ते हट कर अहे ग्राह्यं उं काइ । निश्चय हूं उंउंउं तंउं
 हंर सो रे रे ग्राजि । दुके अकी दए नय । सु० १३ रते कुलकुल
 नय रे जी कांइ अतये विजय तंउं । बरते कुलकुल अउ मति उं
 ते धूनि सुल बहाउ । सु० १४ । कुमारी रहयो धन न न्हइउंउं
 भिगुगर । दसये बूढे एरिउंउं नेपुरने भएकार । सु० १५ हां
 न नयन सहृणउं कांइ । ऐठि अउप मंउं । ऐअएणि दरउंउंउं का
 नु अउई सैसर सु० १६ नम अउछि कीरं नुं कीउं कांइ सुएनि
 अउे उर । कुनरी बरे नहिं जेयनेउं । कबडो रहि चिर धर सु० १७
 अउे उर नप सनमुले जी कांइ हेषे उये तस बूर । तउंने अंन लंनंउंउं
 एउयेजी हेउे अउेउे पूर । सु० १८ । तेने उंउं कुलकुल अंउं उं कांइ उं
 धारणि चिने मन । उं । इएने नहिं ग्राह्य उं । ते कुकिमं लंने देन सु० १९

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

[illegible]

[illegible]

Handwritten musical notation in Devanagari script, featuring various notes, rests, and lyrics.

पुगुर ०० १० २५ उरु की छेउ न छिन उरु उरु हे
 पुगुर ० १० २० २५ ३० ३५ ४० ४५ ५० ५५ ६० ६५ ७० ७५ ८० ८५ ९० ९५ १००
 १० २६ उरु की छेउ उरु की छेउ उरु की छेउ उरु की छेउ उरु की छेउ उरु की छेउ उरु की छेउ
 २० पुगुर ० १० २० ३० ४० ५० ६० ७० ८० ९० १०० ११० १२० १३० १४० १५० १६० १७० १८० १९० २००
 * १ २३ पुगुर ० १० २० ३० ४० ५० ६० ७० ८० ९० १०० ११० १२० १३० १४० १५० १६० १७० १८० १९० २००
 मिलने छेउ छेउ १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२ २३ २४ २५ २६ २७ २८ २९ ३०
 ३१ ३२ ३३ ३४ ३५ ३६ ३७ ३८ ३९ ४० ४१ ४२ ४३ ४४ ४५ ४६ ४७ ४८ ४९ ५० ५१ ५२ ५३ ५४ ५५ ५६ ५७ ५८ ५९ ६० ६१ ६२ ६३ ६४ ६५ ६६ ६७ ६८ ६९ ७० ७१ ७२ ७३ ७४ ७५ ७६ ७७ ७८ ७९ ८० ८१ ८२ ८३ ८४ ८५ ८६ ८७ ८८ ८९ ९० ९१ ९२ ९३ ९४ ९५ ९६ ९७ ९८ ९९ १००
 १०१ १०२ १०३ १०४ १०५ १०६ १०७ १०८ १०९ ११० १११ ११२ ११३ ११४ ११५ ११६ ११७ ११८ ११९ १२० १२१ १२२ १२३ १२४ १२५ १२६ १२७ १२८ १२९ १३० १३१ १३२ १३३ १३४ १३५ १३६ १३७ १३८ १३९ १४० १४१ १४२ १४३ १४४ १४५ १४६ १४७ १४८ १४९ १५० १५१ १५२ १५३ १५४ १५५ १५६ १५७ १५८ १५९ १६० १६१ १६२ १६३ १६४ १६५ १६६ १६७ १६८ १६९ १७० १७१ १७२ १७३ १७४ १७५ १७६ १७७ १७८ १७९ १८० १८१ १८२ १८३ १८४ १८५ १८६ १८७ १८८ १८९ १९० १९१ १९२ १९३ १९४ १९५ १९६ १९७ १९८ १९९ २००

म० वि०

१६ चकार काँचि लो नही तु-ल्लो- ३० २०
 तु-ल्लो न-ल्लो च-ल्लो काँ- ३० २०
 हृदय चर्म देन गऊ मरु मे मरु देहि मरु हृदय दे ३० २०
 देन की करि लो-ल्लो तुल लो-ल्लो म- ३० २०
 म-ल्लो देहि तुल की हृदय देन लो-ल्लो ३० २०
 म-ल्लो ३० २० हृदय मरु तुल ३० २०
 म-ल्लो ३० २० म-ल्लो म-ल्लो ३० २०
 लो-ल्लो ३० २० लो-ल्लो ३० २०
 प-ल्लो ३० २० लो-ल्लो ३० २०
 म-ल्लो ३० २० लो-ल्लो ३० २०
 लो-ल्लो ३० २० लो-ल्लो ३० २०
 हृदय मरु लो-ल्लो ३० २०

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १२ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १३ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १४ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १५ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १६ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १७ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १८ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १९ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २० ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २१ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २२ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २३ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २४ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २५ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २६ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २७ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २८ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २९ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३० ॥

हुइये खंडे में फल है । मागेहे मागे अति छे ल का है
 चिखे ल है ह० २१ * देह
 जगत् में चिखे बहू सु निर संगे करत । एउ उलर १
 उदन में सिसरे सह रत । हख्ये नृपति सुणी । उये मिले समुद्रे ज.ह.उ
 २ हुअ किछे सव परिवर के । चले सुएन य.ख.न मेन छ.दि
 समझि सहू संग ले चले रतन । ३ पुरतन बहू उलह डन यथ ये.र
 सज हेर छरे छिछि से बंछिछे । उरे दूर छ.दि. ले.ए ४ नि.द.वैठि म-
 र. केवली सुएन उमंग र । सई उवे हेर करी मु. समुद्रे ड फ.र.र
 ५ फल २७ छे केरन केरेरे दूर बी.ए यह. ल. ले. हे म.य. उ.ने.
 उलर कुछि म.र. है । ल. ले. नि.द.ए स.ड.क. म.न. दे.ह. ए.र
 दि.हि स.छे है म.र. सु.य. श.छि.ने. छ.दि. है ल. १
 दु.ल. न. ० पू.गे.म.ले. ने.ड. उ.म. से. उ.ए. है दी.ए. मंगल. र. स.हे.

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १२ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २० ॥

1. 物以類聚，人以群分。明一國之盛衰，觀其風俗之淳樸與否，則可知矣。

[illegible]

१. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 २. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ३. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ४. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ५. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ६. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ७. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ८. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ९. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 १०. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥
 ११. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥
 १२. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १२ ॥
 १३. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १३ ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १२ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २० ॥

[illegible]

हे ५० १४ के रिन लिन लिये उरि उरि उरि हे
 हेरि सिद्ध सुनि इनि सुनि रनि मंह चने हे ५० १५ कल गा
 निरु रन क निरु निरु करिउ हे निरु सुद्ध उरि र गा
 हृद्ध हनिउ हे ५० १६ रम रमिउ निरु उरि हे
 मह लदगा ने ह ११ मिले सुह र ३८ हे ५० १७ मुं क कं क
 निरिगिच्छ निरुगड ररंरं हे निरु रर निरु गिड क देर निरु हे
 हे ५० १८ रम रमिउ गुणइरि रमि उरि हे मूण निरु ३८ गा
 का उ नर रमिउ हे ५० १९ सुद्ध वेदक वेद उरि निरु लइ
 ररि हे रनिद्ध नि बुद्धन क रम क दिरि हे ५० २०
 रर वेरि गुरु नर ने देर मगा संकटे हे देर लो उ निरु क
 म र छे देर हे ५० २१ वे ल र नि वे ल र हे वे ल र नि ३८
 हे देर रर रर र छे रर रर हे ५० २२ मू ल केर

ਨਿ-ਕਾਂਡਿਓ ਹਟ ਮਾਨ ਤੈਸਿ ਹੋ ਧਰਿ ਕੀ ਸਮਝਿ ਗਿ ਓ ਧ੍ਯਾਨ ਕ
 ਧੋਨਿ ਹੋ ਮੰ ੨੩ ਭਾਨ ਭੈ ਸਭਾ ਸਾਥੀ ਕਮ ਕਰਣਿ ਮੁਕਿ ਹੋ । ਮਾ-
 ਨ ਨਿਸ਼੍ਚਰ ਦੇ ਰਏ . ਤਿਰਨੇ ਸੁਕਿ ਹੋ ਮੰ ੨੪ । ਰਹ ਰਹਹਾਰ ਸਮਝਲ
 ਓ ਸਰ ਸਠ ਗੁਣ ਪਦੇ ਹੋ । ਮੰ ੨੫ ਅਨਰਾਗ ਨਿਕੈ ਚੈ ਕਠੀ . ਤਿਏ ਹੋ ਕਪੜੇ ਹੋ
 ਮੰ ੨੬ . ਅਹੰਤ ਦੇਵ ਨਿਸ਼ਚਰ ਰੁਕੁ । ਦਰ ਧਰਿ ਰਹਹਾਰੇ ਹੋ . ਦੇਵਨ ਰੁਕੁ
 ਨੇ ਧੰ ੨੭ ਰੂਝ ਮਾਧ ਧਾਰੇ ਹੋ ਮੰ ੨੮ ਸਮਝਲ ਧਰਮ ਕੁਠ ਧਰ . ਦੇਵਨ
 ਦੇ ਪਰਮਾਤਮਾ ਹੋ . ਲਗਤ ਫੂਟੇ ਠਲ ਫੂਸਰੇ । ਆਪੀ ਭਰਮੇ ਲਕਾ ਭੈ ਹੋ ਮੰ ੨੯
 ਓ ਦੇਵ ਭੇਟ ਤਲੇ ਪਲੇ ਸਮਝਲ ਸੁਖ ਅਲਨ ਅਨਧ . ਮਨ । ਆਪੀ
 ਮੰ ੩੦ ਭਰਮੇ ਹੁਕ ਭਾਤ ਫੀਹ ਭੇ ਬਨ ੧ " ਰਾਏਸ਼ਰ ਯਰ ਵਿਯਧ ਯੁ . ਪਾਧ
 ਹੋਏ ਪਕਰ ਪਲੁਕ ਹੋ ਫੁਲ ੨ ਮਨ . ਪਾਮਾ ਕਰੇ ਭਰਫਾਨ ੨ ਸਰ ਨੀਤ
 ਕੁਟ ਕੀ ਕਹੈ ਮਨਰ ਚਿਥ ਸੰਯੋਰ ਚਿਥੇ ਹੋ ਕਿ-ਲੇਖੇ ਕੋਏ ਨਿ-
 ਰਹ ਰਿਝ . ੩ ਤਾਕਰ ਕਰਾ ਤਾਕੇ ਅੰ ਸੰਤੰ ਮਗਨ ਪੂਰੇ ਮੰ ੩੧

वि०र० क० दे०र० उ०र० क०र०
 म०र० दे०र० दे०र० दे०र०
 उ०र० उ०र० २ र०र० उ०र० उ०र०
 म०र० उ०र० म०र० उ०र० म०र० उ०र०
 १ उ०र० उ०र० म०र० उ०र० म०र० उ०र०
 २ र०र० दे०र० उ०र० उ०र० म०र० उ०र०
 उ०र० उ०र० उ०र० उ०र० उ०र० उ०र०
 दे०र० दे०र० दे०र० दे०र० दे०र० दे०र०
 म०र० उ०र० दे०र० दे०र० दे०र० दे०र०
 म०र० दे०र० दे०र० दे०र० दे०र० दे०र०
 उ०र० उ०र० उ०र० उ०र० उ०र० उ०र०

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १२ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २० ॥

[illegible]

[illegible]

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 श्रीकृष्णाय नमः ॥ २ ॥
 श्रीगुरुभ्यो नमः ॥ ३ ॥
 श्रीगणेशाय नमः ॥ ४ ॥
 श्रीविष्णवे नमः ॥ ५ ॥
 श्रीशिवाय नमः ॥ ६ ॥
 श्रीब्रह्माय नमः ॥ ७ ॥
 श्रीमहादेवाय नमः ॥ ८ ॥
 श्रीनारायणाय नमः ॥ ९ ॥
 श्रीरामाय नमः ॥ १० ॥
 श्रीलक्ष्मणाय नमः ॥ ११ ॥
 श्रीसुग्रीवाय नमः ॥ १२ ॥
 श्रीहनुमताय नमः ॥ १३ ॥
 श्रीकालिकाय नमः ॥ १४ ॥
 श्रीदुर्गाय नमः ॥ १५ ॥
 श्रीकामाक्ष्याय नमः ॥ १६ ॥
 श्रीललाटे नमः ॥ १७ ॥
 श्रीचण्डिकाय नमः ॥ १८ ॥
 श्रीवैद्येश्वर्याय नमः ॥ १९ ॥
 श्रीशंकराय नमः ॥ २० ॥
 श्रीमहाशिवाय नमः ॥ २१ ॥
 श्रीमहेश्वराय नमः ॥ २२ ॥
 श्रीमहामायाय नमः ॥ २३ ॥
 श्रीमहाकालाय नमः ॥ २४ ॥
 श्रीमहादेवाय नमः ॥ २५ ॥
 श्रीमहाशक्तिाय नमः ॥ २६ ॥
 श्रीमहाबल्लभाय नमः ॥ २७ ॥
 श्रीमहाप्रभाय नमः ॥ २८ ॥
 श्रीमहासुखाय नमः ॥ २९ ॥
 श्रीमहासुखाय नमः ॥ ३० ॥

[illegible]

[illegible]

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

१० ११ १२ १३ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२ २३ २४ २५ २६ २७ २८ २९ ३० ३१ ३२ ३३ ३४ ३५ ३६ ३७ ३८ ३९ ४० ४१ ४२ ४३ ४४ ४५ ४६ ४७ ४८ ४९ ५० ५१ ५२ ५३ ५४ ५५ ५६ ५७ ५८ ५९ ६० ६१ ६२ ६३ ६४ ६५ ६६ ६७ ६८ ६९ ७० ७१ ७२ ७३ ७४ ७५ ७६ ७७ ७८ ७९ ८० ८१ ८२ ८३ ८४ ८५ ८६ ८७ ८८ ८९ ९० ९१ ९२ ९३ ९४ ९५ ९६ ९७ ९८ ९९ १००

[illegible]

१.०० २.०० ३.०० ४.०० ५.०० ६.०० ७.०० ८.०० ९.०० १०.००
 ११.०० १२.०० १३.०० १४.०० १५.०० १६.०० १७.०० १८.०० १९.०० २०.००
 २१.०० २२.०० २३.०० २४.०० २५.०० २६.०० २७.०० २८.०० २९.०० ३०.००
 ३१.०० ३२.०० ३३.०० ३४.०० ३५.०० ३६.०० ३७.०० ३८.०० ३९.०० ४०.००
 ४१.०० ४२.०० ४३.०० ४४.०० ४५.०० ४६.०० ४७.०० ४८.०० ४९.०० ५०.००
 ५१.०० ५२.०० ५३.०० ५४.०० ५५.०० ५६.०० ५७.०० ५८.०० ५९.०० ६०.००
 ६१.०० ६२.०० ६३.०० ६४.०० ६५.०० ६६.०० ६७.०० ६८.०० ६९.०० ७०.००
 ७१.०० ७२.०० ७३.०० ७४.०० ७५.०० ७६.०० ७७.०० ७८.०० ७९.०० ८०.००
 ८१.०० ८२.०० ८३.०० ८४.०० ८५.०० ८६.०० ८७.०० ८८.०० ८९.०० ९०.००
 ९१.०० ९२.०० ९३.०० ९४.०० ९५.०० ९६.०० ९७.०० ९८.०० ९९.०० १००.००

५०५० ३२५

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १२ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २० ॥

[illegible]

म० २ म० ३ म० ४ म० ५ म० ६ म० ७ म० ८ म० ९ म० १० म० ११ म० १२ म० १३ म० १४ म० १५ म० १६ म० १७ म० १८ म० १९ म० २० म० २१ म० २२ म० २३ म० २४ म० २५ म० २६ म० २७ म० २८ म० २९ म० ३० म० ३१ म० ३२ म० ३३ म० ३४ म० ३५ म० ३६ म० ३७ म० ३८ म० ३९ म० ४० म० ४१ म० ४२ म० ४३ म० ४४ म० ४५ म० ४६ म० ४७ म० ४८ म० ४९ म० ५० म० ५१ म० ५२ म० ५३ म० ५४ म० ५५ म० ५६ म० ५७ म० ५८ म० ५९ म० ६० म० ६१ म० ६२ म० ६३ म० ६४ म० ६५ म० ६६ म० ६७ म० ६८ म० ६९ म० ७० म० ७१ म० ७२ म० ७३ म० ७४ म० ७५ म० ७६ म० ७७ म० ७८ म० ७९ म० ८० म० ८१ म० ८२ म० ८३ म० ८४ म० ८५ म० ८६ म० ८७ म० ८८ म० ८९ म० ९० म० ९१ म० ९२ म० ९३ म० ९४ म० ९५ म० ९६ म० ९७ म० ९८ म० ९९ म० १००

में सधु गृही जसूर मरल्ल सहे छाने को कान्हो लर ते समुने लसने ३
 ह कसनें गुरु मणि उ को कसि लने लल ते समुने लसने ३
 कले छल ४ ते छलह छति सुर करी, कस ते लरने लरने ३
 देह छते मरु छिमे छलर ५, छल ६, सुते कनकरी रह
 रहो सुते सुते छने छने सुख लने छने छने ३
 लने छने छने छने छने छने छने छने छने ३
 छने छने छने छने छने छने छने छने ३
 मर छने छने छने १ ते देह रर छने लरने ३
 अछने लने छने छने छने छने छने छने छने ३
 मरमर छने २, मरमर छने छने छने छने छने छने ३
 ते मर रर छने छने छने छने छने छने छने ३
 लल छने छने छने छने छने छने छने छने ३

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १२ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २० ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥

२
म
म

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १२ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २० ॥

छेड़ें यह दृष्टि । सत्य १२ । तल्ले हेकरे नीर के छेड़ें । सत्य १३
 मर इत्यदि बचन अहं द्या । जगें न न सत्य । सत्य १४
 विला सुन के । रर के तिर हेर । उगरे निम्हरे तेहे ने मेहे निम्हरे
 ति मेर सत्य १४ हे दाव हेइ वदे तद । बेल बचने ने बेल निम्हरे
 मह । देव गुन मा । उगरे बचन से तेले सत्य १५ निगरे का नि
 श्रुत है । इहे तैन धर्म मेर नहिं निश्रुत इग न निहे । सत्य १६ छेड़ें
 छेड़ । सत्य १६ जैन सप्त दिके क रे के निश्रुत के निम्हरे नहिं नि
 अचक छेड़ें नहिं मनु शरी के । सत्य १७ ने निम्हरे कद इहे
 दं बिक मेर बार । इरें ठाव भेल मा । ए ठाव न न सत्य
 १८ । तल्लेडी संग बेलगे । मुम उर उगरे न न रूई उ यह न न क
 तजि । उ छेड़ल टू चहर । सत्य १८ के त बचन सुनि । न न क सु
 सत्य । चित मभर । तल्ले ए ठ चले हुवे । नहिं केरे बंकर । सत्य

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १२ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २० ॥

५४ ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १२ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २० ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २१ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २२ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३० ॥

[illegible]

मेहे के रत्न दुर्लभ अत्यन्त । राजे ॥ ११ ॥ अनन्त पुराये सन किट मली
 नहिं खोबू खणिक सुख काज ॥ इन निश्चय कर स्थिर रह्य नहिं पूज कणीन्द्र
 देवताज ॥ २० ॥ १२ ॥ दिवसेदिय राय भवन् में एक दीर्घ सर्प ग्रंथाय ॥ ब्रह्म
 शरीर रक्त नेण थी । सर्व जनने भय उपजाय ॥ २१ ॥ जेष्ट पुत्र को डंक ये
 पड्यो मुरछाह तत्काल । सज्जन परिजन मिल करी ॥ करे खद्वन् अक्रन्द अस-
 रार राजे ॥ १४ ॥ कर धरि कहे राय को ॥ अब सीद्ध बली महाराय ॥ पुरा-
 करे नग मूर्ति यह तो अन्तर्ध मोटो शय ॥ २० ॥ १५ ॥ राय न मने कोह
 के तब पटराणी ने दिदे डंक ॥ ते भी पडी मुरछाह के ॥ रायजी ते बैठे नि-
 शंक ॥ २० ॥ १६ ॥ अति समजावे सहू भिली ॥ भूद कन धरे नहिं बात । तब
 डुंछे बचला कुमार नेज ॥ तेही पड्यो मुरछाह ॥ २० ॥ १७ ॥ तीनों राणि
 निने पुत्र ने हम करडयो नार करार ॥ छेउ पड्या मुरछाह ने ॥ कुटुम्ब केदि
 हुंछे तेह पुर ॥ २० ॥ १८ ॥ धिक्कारा लग्या रायने ॥ राय कहे समता रखो नन् ।

कर्म देव प्रदत्त हूँ नहिं चले एक उत्तम, र० १६, शैकतूर सँ उन्नत
 करे छुंके विधि उपर, जैलक्ष मंत्र मणि छ दे सहू ए छ मर न करे
 लक्ष, र० २०। शैकतूर सँ हे कहे आं करे करे इल ज
 दे क के ए रर करे करे लक्ष मह अक ज रते । २१, पुनः सचि
 स मन्त्र मिले कहे रते न मने रा, तुम रगि जिनो एन, ते दुष्ट न
 दत्त किम छ र० २२, मनुष्य मरे छे दत्त न डूबे अ ए के दंश रह
 पतक जिए मिर चले, दत्त हा एने ज न हंस, र० २३, र ह म उन्नत
 अह उ छे छनडि अ म न, का ए एने कुदेव ने करे मह श्र व क न न करे
 र० २४ इत्य दे सम ज दे द्या ए रर न मने रंन, हल तेरे छ
 मेलन कहे, रर ज मने देव दरिद्र रते २५, देह ते अर मर
 रहं छ विद्ये सजल ग सुडी सिद्ध र म ज सजये एए सहू विधि देव र
 चित दे ठर १ मे सुख लक्ष र सजये उत्त में करे लसेल

१ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 २ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ३ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ४ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ५ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ६ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ७ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ८ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ९ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 १० ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥
 ११ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥
 १२ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १२ ॥
 १३ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १३ ॥
 १४ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १४ ॥
 १५ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १५ ॥
 १६ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १६ ॥
 १७ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १७ ॥
 १८ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १८ ॥
 १९ ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १९ ॥
 २० ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २० ॥

① ② ③ ④ ⑤ ⑥ ⑦ ⑧ ⑨ ⑩ ⑪ ⑫ ⑬ ⑭ ⑮ ⑯ ⑰ ⑱ ⑲ ⑳ ㉑ ㉒ ㉓ ㉔ ㉕ ㉖ ㉗ ㉘ ㉙ ㉚ ㉛ ㉜ ㉝ ㉞ ㉟ ㊱ ㊲ ㊳ ㊴ ㊵ ㊶ ㊷ ㊸ ㊹ ㊺ ㊻ ㊼ ㊽ ㊾ ㊿

निरगि पद निर धरुं ग रु० १७ ग रु० ते उगए ते उरतल ते
 ऊरु न ऊरु महे ग० ग० । दखये सुउ म न भेद उर ऊरुतल उर रहे
 ग० १८ सुए रर हे ग रुढी अहे विस्तर होर हे उह हट नहे
 कम को सुए सुए ; अरसर अर खो अर नर न अर सुउरुतल अ
 सुए र० १८ सुए र० मर करे कय से नन न मे करेते ते
 उगए सुए हूं मज वंग । तर दुख खेसे दुर ऊगए
 सुए र० १९ सुए र० है मी उरू जैन धर्म संगति करे महुत ए
 सुए सुए छे छंडी अरर सदिता समकल गुरु मणि सु० २०
 सु० अल देव मह ल म प्रत्यक्ष ते विवरये सुए रहे उर उर सु
 न म छे मनुष्य अरये सुए २१ सुए संसारी देत दुरि ते
 इगरे लेखे किये सुए अति तगर हट उर कदा कहें उर द र ए
 दिये २२ सर उर उर नर एक ने विधु मति सुए सुए २३

ॐ नमः

हेवक देवनेरेलो । १३ । अहो ! नहीं इए लोके सुख चाहत जो । लय उया
 हं समति सब संसर की रेले । अहो ! सब सिल्या वर अनन्त जो । तुष्ट न
 हूँ अत इक्षरी अजर नरेले । १४ । अहो । अनिर दणिक सुख काज
 कौन सूखे हरेगा नित्य सुख सायनारेले । अहो । दुर्लभ लाभ हूँ
 भुक्त जो । गमना पीबि दुर्लभ हवे अयनारेले । १५ । अहो ए ग रुड
 न तजु प्रणान्ते टेक जो । न भुं कदणि जिनउ । अय देवदेरे अहो ।
 अहो । उन्नमट रहस्य जो । तुम्ह ने बेतव । कहि ऐह बतें में वसिले । १६ ।
 अहो । धर हट मत ताण जो । तो कर अलाइ स्वेतन छे प्राणियरेले
 अहो । दूटि आयुष्य की स्थित जो । स न्य सके नहीं शक्ति किसी ही देवने-
 रेले । अहो ! जो पूरे हुन इन के कालजो तो जा दर तुम्ह गरज नहि
 भुक्त हेवनेरेलो । १८ । अहो सुए । ओताजी इरादि छिदि वत जो

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 श्रीकृष्णाय नमः ॥ २ ॥
 श्रीगुरुभ्यो नमः ॥ ३ ॥
 श्रीगणेशाय नमः ॥ ४ ॥
 श्रीविष्णवे नमः ॥ ५ ॥
 श्रीशिवाय नमः ॥ ६ ॥
 श्रीब्रह्माय नमः ॥ ७ ॥
 श्रीमहेश्वराय नमः ॥ ८ ॥
 श्रीनारायणाय नमः ॥ ९ ॥
 श्रीरामाय नमः ॥ १० ॥
 श्रीलक्ष्मणाय नमः ॥ ११ ॥
 श्रीसुग्रीवाय नमः ॥ १२ ॥
 श्रीहनुमताय नमः ॥ १३ ॥
 श्रीकामदेवाय नमः ॥ १४ ॥
 श्रीकामदेव्याय नमः ॥ १५ ॥
 श्रीकामदेव्याय नमः ॥ १६ ॥
 श्रीकामदेव्याय नमः ॥ १७ ॥
 श्रीकामदेव्याय नमः ॥ १८ ॥
 श्रीकामदेव्याय नमः ॥ १९ ॥
 श्रीकामदेव्याय नमः ॥ २० ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥
 श्रीकृष्णाय नमः ॥
 कृष्णार्जुनसंवादे ॥
 अर्जुन उवाच ॥
 द्रुपद उवाच ॥
 भीमार्जुनसंवादे ॥
 अर्जुन उवाच ॥
 धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे
 समवेता युयुत्सवाः
 मामका पांडवस्तथा ॥
 संचरातः प्रहाराय
 तैश्चित्तैर्वीर्यवान् ॥
 क्षणेन प्राणां त्यजन्त्यु-
 त्थानां मया द्रुपद ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १२ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १३ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १४ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १५ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १६ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १७ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १८ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १९ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २० ॥

Handwritten musical notation in a South Indian style, featuring a single melodic line with various rhythmic values (dots, vertical strokes, and horizontal lines) and occasional small annotations. The notation is arranged in a series of horizontal lines across the page.

[illegible]

२६२
॥०॥०॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १२ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १३ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १४ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १५ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १६ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १७ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १८ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १९ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २० ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 श्रीकृष्णाय नमः ॥ २ ॥
 श्रीगुरुभ्यो नमः ॥ ३ ॥
 श्रीपितामहे नमः ॥ ४ ॥
 श्रीमते नमः ॥ ५ ॥
 श्रीशंकराय नमः ॥ ६ ॥
 श्रीविष्णवे नमः ॥ ७ ॥
 श्रीब्रह्मणे नमः ॥ ८ ॥
 श्रीसूर्याय नमः ॥ ९ ॥
 श्रीचंद्राय नमः ॥ १० ॥
 श्रीशिवाय नमः ॥ ११ ॥
 श्रीगणेशाय नमः ॥ १२ ॥
 श्रीनारायणाय नमः ॥ १३ ॥
 श्रीहरिणे नमः ॥ १४ ॥
 श्रीकल्याणाय नमः ॥ १५ ॥
 श्रीसुखाय नमः ॥ १६ ॥
 श्रीसौख्ये नमः ॥ १७ ॥
 श्रीशान्तिाय नमः ॥ १८ ॥
 श्रीवैश्वानराय नमः ॥ १९ ॥
 श्रीसर्वभूतहिते नमः ॥ २० ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

१. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 २. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ३. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ४. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ५. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ६. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ७. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ८. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ९. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 १०. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥
 ११. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥
 १२. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १२ ॥
 १३. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १३ ॥
 १४. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १४ ॥
 १५. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १५ ॥
 १६. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १६ ॥
 १७. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १७ ॥
 १८. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १८ ॥
 १९. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १९ ॥
 २०. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २० ॥

२. अहं एतं न हं हं एतं न हं हं एतं न हं हं एतं न हं हं
 ३. अहं एतं न हं हं एतं न हं हं एतं न हं हं एतं न हं हं
 ४. अहं एतं न हं हं एतं न हं हं एतं न हं हं एतं न हं हं
 ५. अहं एतं न हं हं एतं न हं हं एतं न हं हं एतं न हं हं
 ६. अहं एतं न हं हं एतं न हं हं एतं न हं हं एतं न हं हं
 ७. अहं एतं न हं हं एतं न हं हं एतं न हं हं एतं न हं हं
 ८. अहं एतं न हं हं एतं न हं हं एतं न हं हं एतं न हं हं
 ९. अहं एतं न हं हं एतं न हं हं एतं न हं हं एतं न हं हं
 १०. अहं एतं न हं हं एतं न हं हं एतं न हं हं एतं न हं हं

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

ॐ
ॐ
ॐ

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १२ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १३ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १४ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १५ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १६ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १७ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १८ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १९ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २० ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ११ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १२ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १३ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १४ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १५ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १६ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १७ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १९ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २० ॥

[illegible]

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥
 नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

Handwritten musical notation on a single staff, featuring various notes, rests, and bar lines.

১৯০৫

[illegible]

समस्त लोकेषु लोकांस्तु तां न शतं निधनं भवेत्
 नृकुलं नृकुलं नृकुलं नृकुलं नृकुलं नृकुलं १

अथैतत्तु गृहीतं तस्मिन् समस्त लोकेषु
 एतत्तु गृहीतं श्रवणं होतुं शिवं सुखं सत्यं
 अथैतत्तु गृहीतं नृकुलं नृकुलं नृकुलं नृकुलं
 एतत्तु गृहीतं सत्यं सत्यं सत्यं सत्यं २

एतत्तु गृहीतं नृकुलं नृकुलं नृकुलं नृकुलं
 अथैतत्तु गृहीतं नृकुलं नृकुलं नृकुलं नृकुलं
 एतत्तु गृहीतं नृकुलं नृकुलं नृकुलं नृकुलं

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

હાજ્યો કે:—‘ અહા ! મારા દુષ્ટ ચેષ્ટિતને ધિક્કાર થાઓ. કારણ કે આ તો પૃથ્વીપાલ છે અને હું તો પશુ કરતાં પણ ક્ષુદ્ર છું, કે આવા અવસરે હું એને અનર્થમાં નાખું છું. મારે પોતાનું કાર્ય સાધવામાં પુનઃ ઘણા અવસરો મળી શકશે. ’ આમ વિચારીને તે યુદ્ધને માટે તૈયાર થયો. પછી તેની સહાયતાથી રાજા તે શત્રુગણને છતી અને ગોધન લઈને મહોત્સવપૂર્વક પોતાના નગરમાં દાખલ થયો. પછી ત્યાં રાજાએ વિચાર કર્યો કે:—‘ આ અશ્વની સહાયતાથીજ હું શત્રુઓને છતી શક્યો છું માટે એજ પટ્ટાન્ધ થાઓ, ખીન્નઓથી સર્થુ. ’ એમ કહીને રાજાએ તેને સુવર્ણના આભરણો પહેરાવ્યાં, એટલે તેવા પ્રકારનો આદર જેવાથી તે અશ્વે પણ કુમતિ તણ દીધી.

एवं स काणोऽपि तुरंगमो यथा,
वभूव मान्यो विनयादिभिर्गुणैः ।
संगृह्यतां भो भविकास्ततो गुण-
श्रेणिर्भवद्भिः कृपणैर्यथा धनम् ॥ १ ॥

આ પ્રમાણે તે કાણો અશ્વ પણ જેમ વિનયાદિક ગુણોથી માન્ય થયો. તો હે ભગ્ય જનો ! કૃપણ જેમ ધનનો સંઘરો કરે, તેમ તમે પણ ગુણોનો સંગ્રહ કરો, કે જેથી શિવસંપત્તિ સન્નિધિ આવે.

॥ इति श्रीउपदेश सप्ततिकायां चतुर्थेऽधिकारे

सप्तम उपदेशः ॥ ७ ॥

અષ્ટમ ઉપેદશ.

ગુણુવંત જનોના ગુણો જોઈને વિવેકી જનોએ તેનો મત્સર કરવો ઉચિત નથી. આ સંબંધમાં પ્રાહ્મણોનું દષ્ટાંત છે.

પ્રાહ્મણોની કથા.

કુમારપાલ પ્રમુખ અનેક રાજાઓને પ્રતિબોધ આપનાર ચિરકાલ પર્યંત શ્રી જિન શાસનની પ્રભાવના કરનાર, અનેક નવીન ઇંચોની રચના કરનાર તથા પોતાની કીર્ત્તિરૂપ કર્પૂરથી ભૂતલને સુગંધી કરનાર એવા શ્રી હેમચંદ્રસૂરિ હતા. એકદા તે ચોરાશી વર્ષ પ્રમાણ પોતાનું આયુષ્ય સંપૂર્ણ કરીને સ્વર્ગે ગયા. કયા મહાત્માઓને પણ દેવે અસ્ત નથી કર્યા ? તે વળતે તેવા પુરૂષ રત્નના વિનાશથી રાજા વિગેરેને મનને સતાવનાર (સંતાપકારક) એવો શોક થયો. ‘ અહા ! પ્રથમ તો અશેષ ગુણોના સ્થાનભૂત અને વસુધાના અલંકારરૂપ પુરૂષરત્નને પેદા કરે છે, તોપણ તેને ક્ષણભંશુર બનાવી દે છે. અહા ! વિધાતાની અપંડિતતા ખરેખર ! એટલે ઉપજાવે તેવી છે. પછી તેમનું વિમાન સદૃશ ઝંપાન (માંડવી પ્રમુખ) બહાર નીકળ્યું. અને નગર વિશ્રામ કરીને પુનઃ તેને ભાવિક ભવ્યોએ ઉપાડ્યું. તે સ્થાનની ધૂલિ તીર્થભૂત હોવાથી પાટણવાસી જનોએ એવી કોઈ રીતે ગ્રહણ કરી, કે જેથી ત્યાં એક ખાડો પડી ગયો અને તેથી તે હેમખડુ એવા નામથી સમસ્ત લોકમાં પ્રખ્યાત થયો. પરંતુ કેટલાક વિરોધી પ્રાહ્મણો તેને વિપરીત રીતે સ્થાપન કરવા લાગ્યા:— ‘ અહીં હેમચંદ્ર ગુરૂને પ્રક્ષિપ્ત કર્યા છે તેથી એ

હેમખડુ કહેવાય છે' આ પ્રમાણે તે મૂર્ખા અને અધમ બ્રાહ્મણો પ્રતિપાદન કરતાં હતાં. જેમ તેમ પ્રલાપ કરનારા એવા તેમને યુક્તિ વિશારદ જનોએ આ પ્રમાણે પ્રત્યુત્તર આપવો કે:—‘હે બ્રાહ્મણો ! સાંભળો—જ્યારે શ્રી હેમસૂરિનું મરણ થયું, ત્યારે બધા વિષે અંતરમાં અધિક આનંદ પામ્યા. કારણ કે ધ્રુવડને જેમ સૂર્ય, તથા હુર્જનોને જેમ સજ્જન રૂએ નહિ, તેમ તેમનો શ્રેષ્ઠ ઉદય તે બ્રાહ્મણોને રૂચતો ન હતો.’ પછી પદ્માવતી દેવીએ તેમના મસ્તકમાં પીડા ઉપજાવી. તેથી અત્યંત પીડા પામતો તે અમંદ આકંદ કરવા લાગ્યા. શોકથી સંતપ્ત મનવાળા એવા હજાર બ્રાહ્મણોએ પોતપોતાની ગોત્ર દેવી વિગેરેને લોગાદિક ધર્યાં. એટલે દેવીઓએ પણ કહ્યું કે:—‘અહીં અમારાથી કંઈ પ્રતિક્રિયા થઈ શકે તેમ નથી, પરંતુ તમે પદ્માવતી દેવીનું સ્મરણ કરો. એટલે તેમણે તેમ કર્યું. પછી પદ્માવતીએ પ્રત્યક્ષ થઈને તેમને કહ્યું કે:—‘હે દુષ્ટો ! આ અસ્થાને તમારે હર્ષ કેવો ? ત્રૈલોક્યને પૂજ્ય એવા એમના પંચત્વથી દેવતાઓ પણ શોક-સંતપ્ત થયા અને તમને મૂર્ખાઓને કંઈ ન થયું.’ આ પ્રમાણે તેમની તર્જના કરીને દેવીએ પુનઃ આ પ્રમાણે કહ્યું કે:—‘આ સ્થાનની ધૂલિ જો તમે ગ્રહણ કરો, તો તમને નિરોગતા થાય.’ આથી તેમણે તે પ્રમાણે કર્યું. કારણ કે સ્વકાર્યમાં એક પરાયણ એવા આર્તજનો શું શું કરતાં નથી ? પછી તે ધુલિથી તે સર્વની શિરોવ્યથા વિલય પામી અને બીજા પણ કોઈ વિગેરે દુષ્ટ રોગો વિના વિશંખે વિલય પામ્યા. વળી તે ધૂલિના પ્રભાવથી તેમને પુત્ર, પૌત્રાદિક સંતતિ તથા લક્ષ્મી, શાંતિ અને માંગલ્ય પ્રમુખ પણ પ્રાપ્ત થયાં. પછી લોલલુબ્ધ તે બ્રાહ્મણોએ ત્યાંથી

ધૂલિ એવી રીતે ગ્રહણ કરી કે, કેટલાક વખત પછી અનુક્રમે ત્યાં એક મોટો ખાડો થઈ પડ્યો. એ પ્રમાણે તે હેમખડુ થયો, પણ હે વિપ્રો ! તમે વિપરીત શાથી પ્રરૂપો છો ? હૃદયમાં કંઈ વિચાર પણ કેમ કરતાં નથી ? જે ગુરૂના માહાત્મ્યથી અમાવાસ્યા પણ પૂર્ણિમા થઈ, પ્રભૂત ભાગ્યવંત એવા તેમની નિંદા કોણ કરે ? વળી ખાદ્યાવસ્થામાં જેમના હસ્તસ્પર્શમાત્રથી પણ વ્યવહારીના ઘરમાં અંગાર (કોલસા) નો ઢગલો એક ક્ષણવારમાં સુવર્ણમય થઈ ગયો. તે વખતે તેમનું હેમચંદ્ર એવું પરમ નામ અરિતાર્થ થયું, અને વ્યવહારિયાએ તેમનું ઉત્તમ સૂરિપદ કરાવ્યું.

तस्माद्विचार्य हृदये, विधेयो गुणिनां स्तवः ।

न तेषु मत्सरः कार्यो नरैः स्वहितमिच्छुभिः ॥ १ ॥

આ પ્રમાણે અંતરમાં વિચાર કરીને ગુણી જનોની સ્તુતિ કરવી, પણ સ્વહિતને ઇચ્છનારા જનોએ તેમના પર મત્સર કદાપિ ન ધરવો.

॥ इति श्रीउपदेशसप्ततिकायां चतुर्थेऽधिकारे

अष्टम उपदेशः ॥ ८ ॥

નવમ ઉપદેશ.

પ્રભૂત ભાગ્યવૈભવનો ઉદય થતાં માણસોને કોઈ અસાધારણ વચન કળા પ્રાપ્ત થાય છે, જેને લીધે વાગ્મી વચનપટુ-વાચાળ પુરૂષ કુરૂપમાન છતાં ડામરહૂતની જેમ તે રાજાદિકને માન્ય થયા છે.

હામરદ્રુતની કથા.

પાટણમાં બહુ પરાક્રમી ભીમરાજા રાજ્ય કરતો હતો તેને અત્યંત કુરૂપવાન એવો હામર નામે ગ્રાહ્યણ દ્રુત હતો પરંતુ તે વચસ્વી હોવાથી સર્વત્ર સમયોચિત નિઃશ્લાષપણે જાણતો અને બોલતો હતો તેથી તે અંતરમાં ગર્વ રાખતો હતો તે વખતે માલવદેશમાં અભંગુર ભાગ્યવાન, દાતા, ભોક્તા, ગુણી, શૂર, પ્રતાપી, વિનયી અને ન્યાયી એવો ભોજરાજા રાજ્ય કરતો હતો.

એકદા રાજાએ તે દ્રુતને ભોજરાજાની પાસે મોકલ્યો અને કહ્યું કે—‘ હે વિપ્ર ! ત્યાં જઈને તારે એવું એવું બોલવું.’ આ પ્રમાણે લાંબો વખત તેણે કહેલ વિચાર સાંભળી તેની અવગણના કરીને ત્યાંથી ઉઠતાં તેણે વસ્ત્રના છેડા બંધે એટલે રાજાએ કહ્યું કે— ‘ આ શું ? ’ તે બોલ્યો કે— ‘ તમારું કથન બધું અહીંજ નાખી દીધું. ’ આથી રાજા અત્યંત રૂષ્ટમાન થયો. ‘ હવે હું એવો પ્રપંચ રચું, કે જેથી મારી તરફ પ્રત્યનીક (વિરોધી) એવો આ પાપી ત્યાં જાય કે તરત ત્યાંનો રાજા એને વિડંબના પમાડે. ’ આ પ્રમાણે કોપને મનમાં ગુસ્સો રાખી રાજાએ રાખને રેશમી વસ્ત્રના બહુ રીતે વેષ્ટન પૂર્વક બાંધી તેને એક સુવર્ણની હાથલીમાં નાખી, તેની ઉપર પોતાની મુદ્રા દઈને તે દ્રુતના હાથમાં આપીને રાજાએ તેને કહ્યું કે— ‘ હે દ્રુત ! મારું આ ભેટણું તે રાજાને તારે આપવું. ’ પછી દ્રુત ત્યાંથી ચાલ્યો અને ક્ષેત્રપૂર્વક ધારાનગરે પહોંચ્યો ત્યાં ભોજરાજાને મળ્યો, એટલે તેનું રૂપ જોઈને રાજાએ પણ તેને પૂછ્યું કે— ‘ હે દ્વિજ ! તારા રાજાના સંધી અને વિથહના સ્થાને દ્રુતો કેટલા છે ? ’ તે

ખોલ્યો કે:— ‘ હે માલવેશ ! મારા જેવા તો તે ઘણા હોતો
છે; પણ તેમાં તેમની યોગ્યતાના કમથી અધમ,
મધ્યમ અને ઉત્તમ બુદ્ધિવાળા—એવા ત્રિવિધ હોતોને મોકલ-
વામાં આવે છે.’ આ પ્રમાણે તેના સમિતભર્યા ઉત્તરથી ધારાપતિ
રંજિત થયો અને અંતરમાં વિસ્મય પામીને રાજાએ સસ્નેહ
તેને ખોલાવ્યો એટલે તેણે પણ પોતાના રાજાએ આપેલ પ્રાણત
તેની આગળ મૂક્યું એવામાં સલાસદો બધા લેગા થઈ તે સુવર્ણ
સમુદ્ગક (ડામરી)ને જોઈને ‘ આમાં કંઈક અપૂર્વ સ્ત્રીજ હશે ’
એમ ધારી તે જોવાને સમુત્સુક થયા, પછી જેવામાં સેંકડો મનોરથ
કરી રાજાએ તેને ઉઘાડ્યું અને તેમાં રાખ જોઈ તેથી વિલક્ષ
(ગંબુ) મુખ કરી ‘ આ શું ? ’ એમ તે ખોલ્યો એટલે હોતે
વિચાર કર્યો કે:— ‘ તે પાપી રાજાએ ખરેખર મને ઉખેડી નાંખ-
વાનો ઉપાય આરંભ્યો છે તથાપિ મારે અહીં સમયોચિત ખોલવું
એમ ધારીને તેણે કહ્યું કે:— ‘ હે દેવ ! સાંભળો—અમારા સ્વામી
એ અશ્વો અને રોગોથી પીડાતા માણસોની શાંતિ ને મારે લક્ષ
હોમયજ્ઞ કર્યો તેની આ ઉત્તમ રાખ છે, સોનામહોર આપતાં પણ
તેનો લવ માત્ર મળી ન શકે, વળી છ મહિનાનો રોગ-એનાયી નાશ
પામે અને પુનઃ થાય નહિ. આ રાખને તિલમાત્ર પણ મેળવનારને
ભાગ્યવંત સમજવો. હે રાજા ! વધારે શું કહું ? પણ એના
પ્રભાવથી અંતઃપુરને, અશ્વોને અને નગર જનોને એક ક્ષણવારમાં
રોગોપશાંતિ થાય. અલીષ્ટ મિત્રતાથી તે રાજાએ તમને આટલું
લેટણું મોકલ્યું છે. મારે હે રાજેન્દ્ર ! તેનું બહુમાન કરો. ’ આથી
સંતુષ્ટ થયેલ રાજાએ સર્વ સલાસદોને અને સ્ત્રીજનોને તે થોડી

થોડી આપા અને તે સપ્તભાવી હોવાથી તેમણે સ્વીકારી. પછી તે હૃતને રાજાએ પાંચસો શ્રેષ્ઠ સોનામહોર અને અશ્વ તથા પટ્ટકુલાદિ તેના માગ્યા પ્રમાણે આપ્યા. તે બધું લઈને તે પાટ-ટણમાં આવ્યો અને તે ભીમરાજને બતાવ્યું. આથી રાજાએ સંતુષ્ટ થઈને તેને પૂછ્યું કે:—‘હે વિપ્ર ! ત્યાં જઈને તે શું શું કહ્યું, તે અત્યારે કહી સંભળાવ. ’ એટલે તેણે યથોક્ત પોતાનો વૃત્તાંત કહી બતાવ્યો. અને તેથી રાજા અત્યંત વિસ્મય પામ્યો.

હવે પુનઃ એકદા તેને ગર્વિષ્ઠ જોઈને રાજાએ કહ્યું કે:— ‘હે મૂઢ ! મારા પ્રસાદથી જીવીને ગર્વ શું કરે છે ? ’ તેણે કહ્યું કે:—‘હે રાજા ! હું મારી વચનચાતુરીથીજ જીવું છું, તેમાં તારું શું છે ? ’ આ પ્રમાણે વિવાદ થતાં રાજાએ ફરી પણ તેને ત્યાં મોકલ્યો, અને રાજાએ એક લેખ મુદ્રિત કરીને તેને આપ્યો. એટલે અનુક્રમે તે હૃત જ્યાં ભોજભૂપ બેઠો હતો, ત્યાં જઈ પહોંચ્યો. તે વખતે સ્નાન પીઠપર બેઠેલ અને જળથી મસ્તકને જેણે આર્દ્ર કરેલ છે એવા રાજાએ તેને બોલાવ્યો કે:— ‘હે હૃત ! તને સ્વાગત છે. ’ વળી રાજાએ જરા હાસ્યથી તેને પૂછ્યું કે:—‘પાટણમાં રહેનાર તારો સ્વામી ભીમક નામિત આજ કાલ શું કરે છે ? ’ તેણે કહ્યું કે:—‘તે બહુ રાજાઓનાં મસ્તક મુકે છે. પણ આર્દ્ર કરેલ આ તમારા મસ્તકનો તો અઘાપિ વારો પણ આવતો નથી. ’ આ વાક્યથી ધ્વનિત થયેલ રાજાએ તેને હુવર્ણની જીલ અપાવી. અથવા તો સમયોચિત વચન કોને ન રૂચે ? પછી તે લેખ બોલીને જટલામાં તે પોતે વાંચે છે, તેટલામાં ત્યાં ‘હૃતને મારી નાખજો. ’ એવી પંક્તિ રાજાના જોવામાં આવી. પછી ક્ષણવાર વિચારીને રાજાએ તે

હતની આગળ યથાસ્થિત વૃત્તાંત જણાવ્યો. એટલે આકાર ગોપવીને હતે પણ રાજાને આ પ્રમાણે કહ્યું કે:—‘ હે રાજેન્દ્ર ! સાંભળો—મારી જન્મ યત્રિકા મને યાદ આવી. તેમાં હિતૈષી દૈવજ્ઞે એવું લખ્યું છે કે—‘ પચાશમે વર્ષે એની એક આવલિકા પણ વિપત્તિ કરનાર છે અને જ્યાં એનું મરણ થશે, ત્યાં બાર વરસનું દુર્લેક્ષ પડશે. હે પ્રભો ! તે ધુર્તરાજાએ મને અહીં તમારી પાસે મોકલ્યો છે. માટે તેના ગ્રાસના અનુભવપણાને ધ્યેયતા એવા માફ મરણ થાઓ. ’ આ પ્રમાણે કંઈક મગરૂરીથી કહીને જેટલામાં તે પોતાના ઉદરમાં છરી મારવા લાગ્યો, તેવામાં રાજાએ તેનો હાથ પકડીને અટકાવ્યો. છતાં ‘ હે દેવ ! હું મરીશજ, મને શા માટે અટકાવો છો ? જો સત્વર નાશવંત પ્રાણ સ્વામીના કાર્ય માટે જતા હોય, તો લલે જાઓ. ’ આ પ્રમાણે ઘોલતા તેને અટકાવી એક હળાર સોના મહોર અને પાંચસો ઘોડા આપીને પોતાના દેશથી પણ તેને દૂર રવાનો કરી દીધો. પછી મોટા આડંબર પૂર્વક તેણે ભીમ રાજાને પ્રણામ કર્યા અને પોતાનો યથાસ્થિત વૃત્તાંત સવિસ્તર કહી બતાવ્યો. ત્યારથી તે પોતાની અચનકગાથી રાજા વિગેરેને માન્ય થઈ પડ્યો. માટે હે ભવ્યજનો ! તમે પણ તે વાકૂકલામાંજ મનને સ્થિર કરો, કે જેથી સંકટ સાગરના મોજાં તમને સતાવે નહિ અને બંને લોકમાં સુખ સત્વર પ્રાપ્ત થાય.

॥ इति श्री उपदेशसप्ततिकायां चतुर्थेऽधिकारे

नवम उपदेशः ॥ ९ ॥



દશમ ઉપદેશ.

ન્યાય નીતિ એ માણસોનું પરમ નિધાન છે, ન્યાય નીતિથી વિશ્વ સુખી થાય છે અને નદીઓ જેમ સમુદ્રનો આશ્રય કરે તેમ લક્ષ્મી ન્યાય સંપન્ન પુરુષનો આશ્રય કરે છે. દરરોજ સવારે બધા લોકો રામનું નામ સંભારે છે, પણ રાવણને કોઈ યાદ કરતું નથી. તો રામે શું આપ્યું છે અને રાવણે શું લઈ લીધું છે ? પણ માત્ર અહીં સન્યાય એજ કારણ છે. કહ્યું છે કે:—‘ ન્યાય માર્ગે ચાલનારને તિર્થો પણ સહાય કરે છે અને વિમાર્ગે જનારને ભાઈ પણ મૂકીદે છે. જે દિવસે દેવતાઓ પણ સેવા કરતા હતા, તેવા પણ રાવણના દિવસો હતા. અને જ્યારે દિવસો ક્રૂર ત્યારે પત્થર પાણીમાં તરવા લાગ્યા. હે વીર ! જે પત્થર હસ્તર સાગરમાં પોતે ડુબી જાય અને બીજાઓને ડુબાડે, તેજ પત્થર પોતે તરે છે અને વાનર સુલટોને તારે છે. એ પત્થરના સમુદ્રના કે વાનરોના ગુણો નહિ, શ્રીમાન રામચંદ્રના પ્રતાપનો તે મનહર મહિમા ચળકતો હતો, વળી જેની આજ્ઞાથી પડતી ભીંતો પણ નિશ્ચલ થાય છે અને જેના નામના કીર્તનથી ભૂતાદિક વશ થાય છે. તેનું સચ્ચરિત્ર તો દૂર રહો, પણ તેનો સેવક યશોવર્મા રાજા પણ જેવો ન્યાયી હતો, તેવો બીજો કોઈ ભાગ્યે હશે.

યશોવર્મા નૃપની કથા.

કલ્યાણકુટક નગરીમાં રામચંદ્રની જેમ નીતિ-લતાને મેઘ સમાન એવો યશોવર્મા રાજા વિસ્તૃત રાજ્ય કરતો હતો. તેને પોતાના શરીરના મેલની જેમ દ્વિષ્ટ-દ્રેષી પુત્ર પણ ત્યાજ્ય હતો અને

યુષ્મતી જેમ ગુણવાન પરકીય પણ માન્ય હતો. તેણે પોતાના રાજ મહેલના મુખ્ય દ્વાર આગળ એક ન્યાય ઘંટા ખંધાવી હતી. જેને જ્યારે કામ પડે, ત્યારે તે પેલી ઘંટા વગાડે. અને રાજા તે વ્યક્તિની પોતાના ધનથી યા પ્રાણથી પણ કાલજી કરતો હતો. એ પ્રમાણે રાજ્ય પાળતાં તે વખત વ્યતીત કરતો હતો.

એકદા તેના ન્યાયની પરીક્ષા કરવા રાજ્યની અધિષ્ઠાય દેવી ગાયત્રી રૂપ લેઈને રાજમાર્ગમાં બેઠી અને સૌંદર્ય તથા સુકુમાર પદ્માળી મનોહર તથા તરત જન્મેલ એવા એક વાછરડાને વિદુર્વીને તેને પોતાની પાસે બેસાડ્યું. એવામાં તે રાજાનો અતિ ઉદ્ધત પુત્ર રાજમહેલમાંથી એક શ્રેષ્ઠ વાહિની (ગાડી) પર ચડીને ત્યાં આવતો હતો અને અત્યંત વેગથી તેણે તે વાહિની પેલા વાછરડા પરથીજ ચલાવી તેથી તે બિચારો મરણ પામ્યો; આથી તે ગાય અત્યંત ઘરાડા પાડવા લાગી તથા અતિશય આંસુ પાડવા લાગી. આવી તેમની દુર્દશા (થયેલી) જોઈને લોકો હાહાકાર કરવા લાગ્યા. એવામાં કોઈએ તે ગાયને કહ્યું કે:—‘ હે ભદ્રે ! રાજમંદિર આગળ જા અને ત્યાં જે ન્યાય ઘંટા ખાંધી છે તે શીંગડાથી વગાડ કે જેથી રાજા આ તારા અન્યાયનો પ્રતીકાર (ઇલાજ) કરે. કારણ કે રાજા એ સર્વ સાધારણ પંચમ લોકપાલ છે’ આ પ્રમાણે સાંભળીને તેણે ત્યાં જઈને ઘંટાને જોરથી વગાડી તે વખતે રાજા ભોજન કરવા બેઠો હતો ત્યાં અકાલે ઘંટાનો નાદ સાંભળીને સસંભ્રમથી રાજાએ પોતાના સેવકને કહ્યું કે:—‘ અત્યારે ઘંટા કોણે વગાડી ? ’ એટલે તેમણે પણ ત્યાં જોઈને કહ્યું કે:— ‘ અહીં ગાય વિના બીજું કોઈ નથી. ’ ‘ અરે ! અકાલે અહીં

ગાય ક્યાંથી ? એમ બોલતાં રાજા પોતેજ ઉઠ્યો અને ત્યાં આવીને
 ખેદ સહિત રાજાએ તે ગાયને પૂછ્યું કે:—‘ અહા ! ક્યા પાપી-
 એ તારો પણ પરાભવ કર્યો ? જેણે તારો પરાભવ કર્યો તે અત્યા-
 રેજ મને દેખાડ ’ તે બિચારી માનવલાષામાં બોલી તો ન જાણતી,
 પરંતુ આગળ થઈને પૂઠે લાગેલા રાજાને તેણે પોતાના જીવિ-
 તવ્યની જેમ તે વત્સ દેખાડ્યો, એટલે રાજાએ હૃદ્દાદિકપરં બેઠેલા
 મહાજનને પૂછ્યું કે:—‘ આવું કૂર કર્મ ક્યા પાપીએ કર્યું છે. તે
 જણાવો ’ બધા માણસો તે અન્યાય કરનારને જાણતા હતા, પણ
 તેના પુત્રના અનર્થની શંકાથી કોઈએ જવાબ ન આપ્યો એટલે
 રાજાએ વધારે આગ્રહથી પૂછતાં પણ જ્યારે કોઈએ જવાબ ન
 આપ્યો, ત્યારે ક્રોધાયમાન થયેલા રાજાએ ભૂક્ષેપપૂર્વક આ પ્ર-
 માણે કહ્યું કે:—‘ અહા ! તમે પણ પાપી છો. કે આવું અનુ-
 ચિત કૃત્ય જોયા છતાં બોલતા નથી માટે પક્ષપાતી એવા તમને
 ધિક્કાર થાઓ. જ્યારે આ પાપકારી નરાધમ મારી આગળ પ્રગટ
 થશે, ત્યારેજ હું લોજન કરીશ. ’ આવો તેણે અભિગ્રહ લીધો. પછી
 ન્યાયમાંજ એક નિષ્ઠ એવા તેને સંધ્યાપર્યંત રહેતાં તે દિવસે
 લાંઘણ થઈ. અહો ન્યાયની પ્રધાનતા ! એવામાં સાંજરે તે રાજાનો
 પુત્ર ઘરે આવ્યો અને પોતે કરેલ અન્યાય જણાવીને કહ્યું કે:—
 ‘ હે પ્રભો ! મને દંડ કરો. ’ પોતાના પુત્રે કરેલ અન્યાય સાંભ-
 ળીને રાજા હલાયો. પણ જેનાથી કર્ણુએજ થાય, તેવા સુવર્ણથી
 પણ શું ? પછી પ્રભાતે સભામાં રાજાએ નીતિવિશારદોને પૂછ્યું
 કે:—‘ એ પુત્રને શો દંડ કરવો ! તે કહો. ’ એટલે તેઓ બોલ્યા
 કે:—‘ હે પ્રભો એક લોચન સદૃશ રાજ્યને લાયક આ તમારે
 એકજ પુત્ર છે. માટે એને શો દંડ હોય ? ’ પછી રાજાએ કહ્યું

કે:—‘ મારે ન્યાયજ્ઞ પ્રધાન છે. અન્યાયી પુત્રથી શું ? જો એને શિક્ષા ન અપાય, તો ખીજા પણ એ પ્રમાણે કરે. માટે હે વિચક્ષણો ! એને જે દંડ થાય, તે કહો. તમારે માફ દાક્ષિણ્ય લેશ પણ ન કરવું. કારણ કે તમને હું અલય આપું છું. ’ એટલે તેઓ બોલ્યા કે:—‘ હે દેવ ! મનોજ્ઞ કે અમનોજ્ઞ જે જેવું કરે, તેને તેવું કરાય—એવી શાસ્ત્રોક્તિ છે. માટે જેમ એણે વત્સ ઉપરથી વાહિની ચલાવી, તેમ એને પણ તેવો દંડ કરાય, પણ એને ખીજો કોઈ દંડ ન થઈ શકે. ’ પછી વાહિની અણાવીને અને પુત્રને રસ્તામાં સુવાડીને રાજાએ માણસોને કહ્યું કે:—‘ હે પ્રજાજનો ! આને પુત્રના ઉપરથી ચલાવો. ’ આવા પ્રકારનો તેનો આદેશ જ્યારે કોઈ પણ ઉઠાવી શક્યો નહિ, ત્યારે રાજા સર્વ લોકોની સમક્ષ આ પ્રમાણે બોલ્યો કે:—‘ આ મારો દુષ્પુત્ર જીવિતથી ભલે વિનષ્ટ થાઓ. જેને ન્યાય વહેલ નથી, તેવા સ્ત્રીયજનથી પણ શું ? ’ એમ કહીને સહસા પોતે ઉઠી તેના પર બેસી દયારહિત થઈ જેટલામાં તે રાજા પોતે પુત્રની ઉપરથી તે વાહિની ચલાવવા લાગ્યો, તેવામાં ત્યાં ગાય કે વત્સ કોઈ રાજાના જોવામાં ન આવ્યા, પણ દેવી આંગળા આવીને તેની આ પ્રમાણે પ્રશંસા કરવા લાગી:—‘ હે સત્ત્વવંતમાં અગ્રેસર ! હે ન્યાય પરાયણ ! તું જય પામ. શ્રી રામની જેમ તારા સૌભાગ્યને કોણ સ્તવી શકે ? તારો પુત્ર આયુષ્માન્ થાઓ અને તું સામ્રાજ્યનું પરિપાલન કર. આ તો મેં તારી પરીક્ષા કરી. ’ એમ કહીને તે દેવી અંતર્ધાન થઈ ગઈ.

एवं न्यायः पालनीयो नृपायै-

यस्मात्सर्वाः संपदो हस्तगाः स्युः ।

શસ્યાનિ સ્યુઃ કિં વિના વારિવાહં,
પ્રાવૃટ્કાલે પ્રાચ્યમાસદ્વયોત્થમ્ ॥ ૧ ॥

એ પ્રમાણે રાજા વિગેરેએ ન્યાય પાળવો, કે જેથી સર્વ સંપત્તિઓ હસ્તગત થાય. વર્ષાકાલમાં પૂર્વના એ માસના મેઘ વિના શું ધાન્ય ઉત્પન્ન થાય ?

॥ इति श्री उपदेशसप्ततिकायां चतुर्थेऽधिकारे
दशम उपदेशः ॥ १० ॥

एकादश उपदेश.

ધર્મ સદા માણસોને ફળ તો આપેજ છે, પણ પર્વ દિવસે કરેલ ધર્મ વિશેષ ફલદ થાય છે. વર્ષાકાલનું બધુંએ જળ ઇચ્છિત આપે છે, છતાં સ્વાતિ નક્ષત્રનું જળ મોતી ઉત્પન્ન કરે છે, ‘આયુષ્યનો બંધ પ્રાયઃ પર્વ દિવસે થાય છે.’ એમ જીનેશ્વરે કહે છે, માટે તે પર્વ દિવસે સૂર્યચંદ્ર રાજાની જેમ ધર્મમાં વિશેષે દૃઢતા રાખવી જોઈએ.

સૂર્યચંદ્ર નરેન્દ્રની કથા.

અયોધ્યા નગરીમાં પ્રથમ ચક્રવર્તીનો કુશળ એવો સૂર્યચંદ્ર ભૂપ પુત્ર હતો. જેના નામથી આ વસુધાતલ પર અત્યંત વિસ્તૃત એવો સૂર્યવંશ પથિત પ્રસિદ્ધ થયો. દશ હજાર રાજાઓ

સહિત તે પર્વના દિવસે પૌષધવ્રત કરતો હતો. તેની આજ્ઞાથી તે દિવસે બાળકો પણ ભોજન કરતાં નહિ, તો આસ્તિક જનો તો શેના કરે ?

હવે એકદા તેના ગુણથી રંજિત થઈ મસ્તકને ધુણાવતા એવા ઇંદ્રને ઉર્વશી કહેવા લાગી કે:—‘ હે સ્વામિન્ ! નિમિત્ત વિના કેમ આ મસ્તક ધુણાવ્યું ? ’ એટલે ગૌરવપૂર્વક તેને કહ્યું કે: ‘ અયોધ્યાપુરીમાં સુશ્રાવક સૂર્યયશા નરેશ્વર વિશાલ રાજ્ય કરે છે. હે કમલાનને ! તેના વ્રતની દૃઢતા જોઈને મેં શિર હલાવ્યું. ’ (અનુમોદન કર્યું) આ સાંભળીને તે બોલી કે:—‘ હે નાથ ! એક મનુષ્યમાત્રની આવી વૃથા સ્તુતિ કેમ કરો છો ? કે જે સાત ધાતુથી બંધાયેલ અને અન્નથી પોષાયેલ એવા શરીરને ધારણ કરે છે. જે તે મારી પરીક્ષામાંથી પસાર થાય, તો તમારું કથન સત્ય છે, અન્યથા વૃથા છે. ’ આ પ્રમાણે કહીને તેની પરીક્ષા કરવાને ઉત્સુક એવી તે રંભાની સાથે અયોધ્યા નગરીમાં આવી. ત્યાં શકાવતાર નામના જિનમંદિરમાં આવીને પોતાના કરકમળમાં વીણા લઈને તે બંને ગીત, નૃત્યાદિક કરવા લાગી. તે વખતે સમીપના વૃક્ષોમાં રહેલા પક્ષીઓ, ભુજંગ, ગૌ, અને હરણાદિક પણ તે નાદમાં લીન થઈ, તથા ઇંતર જનો પણ તેમાંજ એકાગ્ર થઈ બાણે પથ્થરપર આલેખ્યા હોય તેવા સ્થિર થઈ રહ્યા. એવામાં તે માર્ગથી જતાં રાજાએ તેમનો મનોહર ગીતનાદ સાંભળ્યો તે સાંભળતાંજ રાજા સ્તાંભિત થઈ ગયો. અથવા તો ગીતનાદ કોને મોહક ન થાય ? વધારે શું કહેવું, પરંતુ તે વખતે અશ્વ અને પદાતિ પ્રમુખ તેની સેના પણ આગળ

જવાને અસમર્થ થઈને તન્મય થઈ ગઈ. ત્યાં આવી સ્થિતિ જોઈને રાજાને આશ્ચર્ય થયું. પછી ‘ મારાં જે કામ થશે. ’ એમ ધારી તેમાં મોહિત થઈને રાજાએ ચૈત્યમાં પ્રવેશ કર્યો, અને ત્યાં યુગાદીશબ્દિનની સ્તુતિ કરીને તે રંગમંડપમાં બેઠો, અને પોતાના શ્રવણપુટથી તેમના વચનરૂપ સુધારસ પીતાં તથા લોચનથી તેમના શરીરના રૂપની શોભા જોતાં તે પોતાના ચિત્તમાં એક તૃતીય પુરૂષાર્થનેજ શ્રેષ્ઠ સમજવા લાગ્યો. પછી તેમના કુલાદિક જાણવાને રાજાએ અમાત્યને આદેશ કર્યો, એટલે તે પલ્લુ તેમની પાસે જઈને પૂછવા લાગ્યો કે:—‘ તમે ક્યાંથી આવ્યા છો ? તમારું નામ અને કુળ શું ? તે જણાવો. ’ પછી તેમાંથી એક મંત્રીને કહેવા લાગી કે:—‘ અમે શ્રીમણિસૂડ નામના વિદ્યાધર રાજાની પુત્રીઓ છીએ, અને નિરંતર વીણાવિનોદ તથા ગીતાદિકમાં ઉત્સુક અને સજ્જ રહીએ છીએ. એકદા અમારા પિતાએ ‘આ કન્યાઓ હવે કયા વરને આપવી?’ એવી જેટલામાં ચિંતા કરી, તેવામાં પોતાને અલીપ્ત એવા તથા પ્રકારનાં પતિના અભાવને લીધે તે ચિંતાસાગરથી નિવૃત્ત થયો. અર્થાત્ તેણે ચિંતા મૂકી દીધી. જો પતિ સ્ત્રીઓને વશ થાય, તોજ તેમને સુખ છે, અન્યથા ગાઢ વિડંબના માત્ર છે. ત્યારથી હવે અમે સત્તીર્થ સેવાજ કરીએ છીએ. રોગની જેમ લોગમાં હવે અમારું મન નથી. ’ આ પ્રમાણે સાંભળીને રાજાની અનુમતિથી મંત્રીએ પુનઃ તેમની આગળ આદરપૂર્વક કહ્યું કે:—‘ આ રાજા વૃષભસ્વામીના પૌત્ર, ચક્રવર્તીના પુત્ર, કલાવાન, બલવાન, અને સદ્ગુણી છે, તથા તમારા વચનને અન્યથા કરતાં હું એને અટકાવીશ. માટે એને ત-

મારો શ્રેષ્ઠ પતિ કરો. જે તમારા મનમાં રૂચિ હોય, તો કોઈ ભવાંતરમાં પણ આવો પતિ મળવાનો નથી. આ કોલકરારમાં શ્રી જિનેશ્વરજી સાક્ષી, કે જે સમક્ષ બિરાજમાન છે. બીજા જનોને વચમાં નાખવાની કાંઈ જરૂર નથી. ' ઇત્યાદિ ગાઢ આગ્રહથી તેમનું રાજાની સાથે સવિસ્તર વિવાહમંગલ થયું. પછી તે બંનેની સાથે તેમનામાંજ લીન થઈને રાજાએ કેટલાક દિવસો યોગસુખો લોગવ્યાં. કારણકે ગંગા (દેવી) ની સાથે ભરતરાજાએ શું હજાર વર્ષ પર્યંત લોગો નહોતા લોગવ્યા ?

એવામાં એક દિવસે ' હે લોકો ! સાંભળો, કાલે અષ્ટમી-પર્વ થશે. ' એ પ્રમાણે અમંદ ખેદ ઉપજાવનાર અને સ્ફુટ સ્વરે વાગતો એવો પટહુ તે દેવીઓએ સાંભળ્યો. પછી બાણે બાણ-તીજ ન હોય તેમ ઉર્વશીએ રાજાને કહ્યું કે:—' હે નાથ ! આ પટહુ શાને વાગે છે ? ' તે બોલ્યો કે:—' હે તન્વંગી ! પર્વને માટે હંમેશા આ પટહુ વગાડવામાં આવે છે. ત્રયોદશી અને સપ્તમીના દિવસે મારી આજ્ઞાથી એ પટહુ વગાડવામાં આવે છે. જે એમ કરવામાં ન આવે, તો પ્રમાદી જનોને પર્વ અને ઇતર દિનની બખર કેમ પડે ? વળી પર્વ દિવસે અહીં મારી આજ્ઞાથી લોકો પૌષધ, ચતુર્થવ્રત, જ્ઞાન, તપ અને ક્રિયાદિક કરે છે તથા સ્નાન, શિરોશુંકન, અને ખંડન (ખાંડવું) વિગેરેનો નિષેધ કરે છે. ' આ સાંભળીને રંભા બોલી કે:—' હે નરેન્દ્ર ! યૌવન, સદ્લોગનો યોગ અને સુખસંપત્તિ વિગેરે-એ હસ્તગત છતાં પરલોકની આશાથી વૃથા શા માટે હારી બેસો છો ? ' રાજાએ કહ્યું કે:—' હે સુંદરી ! જિનેન્દ્રભાષિત પર્વવ્રત મહા દ્વલદાયક

થાય છે, એમ તાતતુનું કથન છે. તો અદ્ય સુખના માટે હું તે વ્રતનો કેમ ત્યાગ કરું ? જેમનામાં શીલ, તપ, ક્રિયા, વિવેક અને વૈરાગ્ય પ્રમુખ ગુણો નથી, તેમનો જન્મ અહીં પશુઓની જેમ નિષ્ક્રમ છે અને પરલોકમાં તેમને ઘોર દુર્ગતિ પ્રાપ્ત થાય છે. ' એટલે ઉર્વશી ખોલી કે:—' હે ભલા ભૂપતિ ! તે જિનેન્દ્રની સમક્ષ પોતાની જીલ્લથી જે અંગીકાર કર્યું છે કે—' તમારું વચન મારે ઓળંગવું નહિ, શું તે પણ તું ભૂલી ગયો ? જેના વચનમાં સ્થિરતા નથી, તેને ધિક્કાર થાઓ ! પુરૂષોમાં તે પણ એક મૂર્ખ શિરોમણિ ગણાય છે. અમે ભર્તારને સ્વાધીન કરવા કુલાદિકનો ત્યાગ કર્યો અને સુખની ઇચ્છાથી તને પતિ કર્યો. પણ સુખ પ્રાપ્તિને બદલે અમને ઉભય ભ્રષ્ટતા પ્રાપ્ત થઈ. હે વિશે ! હવે અમારે ક્યાં જઈને પોકાર કરવો ? આ એક વખત તારી પરીક્ષા કરી, એટલે તારું વચન ગયું. પણ મારું શું જવાનું હતું ? માટે હવે તો અમે બળતી ચિતામાં પ્રવેશ કરીને મરણને શરણ થશું. માન વિનાના જીવિતથી શું ? ' ઇત્યાદિ તમ સીસા સમાન તેનું વચન સાંભળીને રાજાએ પુનઃ તેને કહ્યું કે—' હે અધમ અંગના ! તું વિદ્યાધરની સુતા નથી, પણ કોઈ દુષ્ટ ચંડાળના કુળમાં ઉત્પન્ન થયેલી લાગે છે. કસ્તૂરિકાની બ્રાંતિથી અંજન અને સુરતરના બ્રમથી મેં ધત્તૂરાનું ગૃહણ કર્યું. વગી હે પ્રિયે ! તું ભંડાર લે, અથવા તો વસુધા લઈ લે, યા તો ખીજી કંઈ જે તને ઇષ્ટ હોય, તે કરું, પણ મને પરિવ્રતનં તજવ. જેના લોપથી અવશ્ય દુર્ગતિજ મળે છે. ' એટલે પુનઃ તે ખોલી કે:—' જેને વચનની પ્રતિષ્ઠા નથી, તે પુરુષાધમ સમજવો. તેના મોટા દાનથી પણ શું ? ' વગી પુનઃ તે કપટાં-

ગના બોલી કે:—‘ જો તારે વ્રતલંગ ન કરવો હોય, તો શકાવતાર નામનું આ ઉત્તત આદિનાથનું મંદિર પાડી નાખ ! આ સાંભળીને રાજા જાણે વજ્રથી ઘાયલ થયો હોય તેવો થઈ ગયો અને મૂર્ચ્છા ખાઈને તરત જમીનપર પડ્યો. પછી ક્ષણવારમાં સાવધાન થઈને તે બોલ્યો કે:—‘ હે પાપિની ! હે દુષ્ટે ! તું નિશ્ચય મ્હેચ્છકુળમાં ઉત્પન્ન થઈ છે, કે જેથી તું આવી દુષ્ટ વાણી બોલે છે. માટે હવે તમે બંને મારી પાસેથી ચાલી જાઓ.’ આથી તે સાંત્વનપૂર્વક પુનઃ બોલી કે:—‘ હે નાથ ! તને વારંવાર કહેવું, પણ તેં માફ એક વચન પણ ન રાખ્યું. તો હવે તારા પુત્રનું મસ્તક મને આપ ! એમ કહેતાં ‘ મારા વિના મારો પુત્ર ન હોય, માટે માફ શિરજ લઈ લે. ’ આ પ્રમાણે બોલતો રાજા તરવારથી પોતાના કંઠને જેટલામાં છેદે છે, તેટલામાં તે બંને પ્રગટ થઈ અને એ રીતે તેની વારંવાર પ્રશંસા કરવા લાગી કે:—‘ હે વસુધાપતિ ! હે ચક્રોન્નહન ! હે સર્વ ઇન્દ્રિયને શાંત કરનાર ! હે સંગવર્જિત ! રાજેન્દ્ર, તું જય પામ. ’ પછી પૂર્વ સંબંધ કહી અને પુષ્પ, સુવર્ણ અને રત્નની વૃષ્ટિ કરીને તે બંને સ્વર્ગમાં ગઈ અને રાજાએ પણ વિશેષ ધર્માચરણપૂર્વક ચિરકાલ પ્રાન્ન્ય (વિશાલ) સામ્રાજ્ય પાળ્યું, અને પ્રાંતે તાતની જેમ કેવલ-જ્ઞાન ઉપાર્જન કરીને તે ભરતસુત સૂર્યયશા રાજા પરમપદ પામ્યો.

આ પ્રમાણે હે ભવ્યજનો ! જો તમારે સમસ્ત સુખ સંપત્તિને સ્વાધિન કરવી હોય, તો ધર્મમાં અતુલ દૃઢતાને ધારણ કરો.

॥ इति श्री उपदेशमहात्मिकायां चतुर्थेऽधिकारे

एकादश उपदेशः ॥ ११ ॥

દ્વાદશ ઉપદેશ.

હઠથી નહિ, પણ વિધિપૂર્વકજ આરાધન કરતાં ધર્મ ફળને આપે છે. વિધિ વિના વ્યય કરતાં પણ કામધેનુએ રાજાને હૂધ આપ્યું નહિ. તામલિ તાપસે સાઠ હજાર વર્ષ પર્થિત સ્વર્ગ-ચિપૂર્વક તપસ્યા કરી, છતાં વિવેકવિના તે અદ્ય ફળને પામ્યો. માટે બહુ કષ્ટ કે યોગથી શું ? વળી કૂરંગદુમુનિ નિત્ય લોજન કરતાં પણ વિવેકની સહાયતાથી કેવલજ્ઞાન પામ્યા અને અન્ય શ્રમણો તપસ્યા કરતાં છતાં પણ તે (જ્ઞાન) મેળવી ન શક્યા.

પ્રથમ શ્લોકમાં કહેલ દૃષ્ટાંત આ પ્રમાણે:—

ધનદશ્રેષ્ઠીની કથા.

પૃથિવીપુરમાં ધનદ નામે શ્રેષ્ઠી હતો. તેને પ્રાયઃ ગોરસ વધારે પ્રિય હતો. દધિ, હૂધ અને હૂધપાક—તે પોતે જમતો અને બીજા મિત્રોને જમાડતો હતો. તેથી તેનું ગોધન બહુ વધી પડ્યું. કોઈ દ્રોણ પ્રમાણ હૂધ આપનારી, કોઈ વંબુલા અને કોઈ સુવ્રતા એમ બહુ ધનનો વ્યય કરીને તેણે સેંકડો ગાયોનો સંગ્રહ કર્યો હતો.

હવે એકદા ધનાથી તે શ્રેષ્ઠી પાંચ છ સારી ગાયોને વહાણમાં લઈને અનુક્રમે રત્નદ્રીપમાં ગયો. ત્યાં સમુદ્રતટપર વહાણોને બાંધીને પોતાના સાર્થને સુસ્થાને બેસાર્યો. પછી સુગંધિ ઘી, સરસ સાકરના યોગથી શ્રેષ્ઠ એવા હૂધપાકના અનેક થાળ લરીને તે શ્રેષ્ઠીએ શ્રેષ્ઠ છતાં રત્નોને, દેહાની જેમ તણને અપૂર્વ

પણથી ત્યાંના રાજાને તેનું લેટણું કર્યું. એટલે સર્વ ઇંદ્રિયોને સુખદ એવા તેનો ઇચ્છાપૂર્વક કંઠ સુધી આસ્વાદ લઇને ઉદ્ગાર કરી પ્રસન્ન થયેલ રાજાએ તેને કહ્યું કે:—‘ હે શેઠ ! આ શું કહેવાય ? એની નિષ્પત્તિ કેમ થાય ? અંથવા તો સ્વર્ગ કે પાતાલનું આ પીયૂષ (અમૃત) લોજન છે ? ’ શ્રેષ્ઠીએ કહ્યું કે:—‘ હે દેવ ! એ દૂધપાક છે, તે ભાગ્ય વિના પ્રાપ્ત ન થાય. પરંતુ પ્રસન્ન થયેલ એક મારી કામધેનું મને દરરોજ તે આપે છે. ’ આથી સંતુષ્ટ થઇને રાજાએ તે શ્રેષ્ઠીની જકાત માફ કરી અને તેથી કય વિક્રય કરતાં ત્યાં તેને ખડુ લાભ થયો. પછી અવસરે પોતાના નગર તરફ જવાની ઇચ્છાથી તેણે રાજાને જણાવ્યું કે:—‘ હે દેવ ! જો આપની આજ્ઞા હોય તો હું સ્વદેશમાં જાઉં. ’ રાજાએ કહ્યું કે:—‘ પરમ અન્નને આપનારી તારી પાસે જે કામધેનુ છે, તે મને આપ, કે જેથી આપણા પ્રેમ નિશ્ચય થાય. ’ તેણે કહ્યું કે:—‘ હે પ્રભો ! આપ પ્રસન્ન રહો. એમાં કહેવાનું શું હતું ? ખુશીથી તે ગૃહીણુ કરો. ’ એમ કહીને તે રાજાને આપી અને પોતે પોતાના નગરે ગયો. હવે રાજાએ તે કામધેનુને એક શ્રેષ્ઠ મકાનમાં રાખી અને આવી આવી રીતે તે તેની આરાધના કરવા લાગ્યો; લોજના યોગથી અનેકવાર તેની વિવિધ પૂજા કરવામાં આવતી, તેને ચામરો વીંજવામાં આવતા, તેના પર છત્રો ધરવામાં આવતાં અને પાંચસો સોનામહોર અર્ચીને રાજા તેને લોજ ધરતો અને બીજાઓપાસે તે ગીત તથા નૃત્યાદિક ઉત્સવો કરવતો હતો અને કહેતો કે:—‘ હે માત મને પરમાત્મ આપો. ’

પણ નિખિડ અજ્ઞાનથી પીડિત એવો તે બિચારો તેના ઉપાયને

જાણતો ન હતો. પછી કેટલેક દિવસે ચારા, પાણી અને શુશ્રૂષાના અભાવથી તે બિચારી મરણ પામી. એટલે રાજા પોતાને પાપી સમજીને નિંદવા લાગ્યો:—‘ અહો ! આપણું અભાગ્ય, અહો ! આપણા પાપનો સમૂહ, કે હાથમાં આવેલ રત્નને પણ દેવે એક શ્વાસારમાં ઉડાડી દીધું.’

હવે એકદા તેજ શ્રેષ્ઠી ત્યાં આવ્યો અને તેવીજ રીતે તેણે રાજાને લેટણું કયું. એટલે રાજાએ તેને કહ્યું કે:—‘ હે ભદ્ર ! અમારા હિંતની ઇચ્છાથી તેં જે અમને કામધેનુ આપી, તેણે એક વખત સ્વદેય પણ પરમાત્મ અમને આપ્યું નહિ. વળી અમોએ તેની અનેક પ્રકારે ભક્તિ કરી, પરંતુ તેણે કોઈ વખત પણ અમને કંઈ પ્રત્યુત્તર પણ ન આપ્યો. પરમાત્મ તો દૂર રહો, પરંતુ તેણે તેની વાત પણ ન કરી. તો શું તેમાં અમારું અભાગ્ય હશે યા બીજું કંઈ કારણ છે ? ’ શ્રેષ્ઠીએ કહ્યું કે:—‘ હે રાજેન્દ્ર ! એને શુષ્ક તૃણાદિક અપાય, અને રોજ એ વાર દોહીને દૂધ લેવાય. તે દૂધ ચોખા સાથે રાંધવાથી દૂધપાક થાય—આવો તેનો વિધિ છે. ઇતર વ્યય કરવાથી શું ? ’ પછી ઉપાય જાણવાથી રાજા દૂધપાક તૈયાર કરાવતો અને તેથી તે સુખી થયો. તથા તે વિધિ તેણે બીજાઓને પણ બતાવ્યો.

આ પ્રમાણે વિધિ પૂર્વક આરાધેલ ધર્મ પણ માણસોને સુખદાયક થાય છે, અને વિધિ વિના આરાધેલ છતાં તે અદ્ય ફલપ્રદ થાય છે. કારણ કે—

‘ નિર્વિવેકી અને વિવેકી જનોએ પૂર્વ ભવમાં ધર્મનું આરાધન કરેલ હશે, પણ વિધિ અવિધિના ભેદથી અવિવેકી

શ્રીપતિ (લક્ષ્મીનો દાસ) અને વિવેકી શ્રીપતિ (લક્ષ્મીનોસ્વામી) એમ યથાક્રમે બંને આરાધક છતાં કૃપામાં ભેદ જોવામાં આવે છે.

एवं भो भविकाः ! निषीय विधिना धर्माभृतं तात्त्विकं.

भुक्त्वा मानवदेवसेवितपदाः संसारसौख्यावलीः ।

निष्प्रत्यूहतयाप्रयास्यथ शिवं यूयं कुदेवादिकं,

मा तत्र क्षिप्तोल्बणं तु गरलं चेद्वો विवेको हृदि ॥ ૧ ॥

આ પ્રમાણે હે ભવ્ય જનો ! વિધિથી તાત્ત્વિક ધર્માભૃતનું પાન કરીને અને માનવ અને દેવોથી સેવિત એવાં સંસાર સુખો ભોગવીને નિર્વિઘ્ન પણે તમે શિવ મંદિરમાં જઈ શકશો. પણ જો અંતરમાં વિવેક હોય, તો ઉઘ્ઘ ગરલ સમાન કુદૈવ, કુચુર વિગે-રેના સેવન રૂપ અતિ ઉઘ્ઘ વિપ તે (સદ્ધર્મ-અમૃત) માં નાંખશે નહીં અર્થાત્ અમૃત સમાન સુદૈવ-ચુર-ધર્મનું સેવન કરી પછી અન્યથા આવચરણ કરશો નહીં.

॥ इति श्रीउपदेशसप्ततिकायां चतुर्थेऽधिकारे

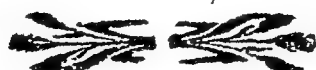
द्वादश उपदेशः ॥ ૧૨ ॥

॥ इति श्रीपरमगुरुतपागच्छनायकश्रीसोमसुंदरसूरिक्रमक-

मलमरालमहोपाध्यायश्रीचारित्ररत्नगणिविनेयपर-

माणुपंडितसोमधर्मगणिविरचितायां

श्री उपदेशसप्ततिकायां चतुर्थः सामान्यधर्माधिकारः





॥ गृहस्थधर्माधिकारः पंचमः ॥

પ્રથમ ઉપદેશ.

શ્રી ધર્મજ સૌખ્ય લક્ષ્મીનું અક્ષય નિધાન અને ભવાં-
તરમાં પાણુ તે સ્વપરને હિતકારી છે. આ સંબંધમાં શ્રી ધર્મ-
રાજના ચરિત્રને સમ્યક્ રીતે સાંભળીને તે ધર્મમાં કોણ મંદ
આદર કરે ?

શ્રી ધર્મરાજની કથા.

આ ભરતક્ષેત્રમાં સર્વમંગલા નામે નગરી છે. ત્યાં શત્રુ-
ઓને ત્રાસ આપનાર એવો ભદ્રશેખર નામે રાજા હતો. તે
રાજા એકદા પરિવાર યુક્ત સભા ભરીને બેઠો હતો. તે વખતે
કોઈ ત્રિકાલજ્ઞ નિમિત્તિયો ત્યાં આવ્યો. એટલે રાજાએ આપેલ
યથોચિત આસનપર તે બેઠો અને હાથ ઉંચો કરીને તેણે સર્વને
આશીર્વાદ આપ્યો. પછી રાજાએ પૂછ્યું કે:—‘ હે નિમિત્તજ્ઞ !
સવિધ્ય કેવું છે ? તે કહે ’ એટલે તે બોલ્યો કે:—‘ હે પ્રભો !
ભાવિ સ્વરૂપ હમણા મને પૂછો નહિં. આથી રાજાએ વિશેષ
કૃતસુક થઈને પૂછ્યું કે:— ‘ શું કોઈ દૈવથી ઉત્પાત થવાનો છે ?
શું થશે ? તેણે કહ્યું કે:—‘ બાર વર્ષનું દુર્લિક્ષ પડશે ! આ

પ્રમાણે અડાંડે વજ્રપાત સમાન તેનું વચન સાંભળીને દુઃખિત થઈને રાજા બોલ્યો કે:— ‘ અરે ! જરા વિચારીને બોલ ! એટલે સર્વ સલાસદોની સમક્ષ પુનઃ નિમિત્તરૂ બોલ્યો કે:— ‘ જો મારું કથન અન્યથા થાય, તો મારી જીભ છેદી નાખવી ! આવી તેની દૃઢ પ્રતિજ્ઞા સાંભળીને તેને પોતાના નગરમાંજ રાખ્યો, પણ બીજે ક્યાંય જવા દીધો નહિ. તથા :સર્વ લોકો પોતપોતાના કુટુંબ પ્રમાણે દેશાંતરમાં જઈને પણ આદરપૂર્વક ધાન્યનો સંચક કરવા લાગ્યા. પોતપોતાની ધનની દરકાર ન કરતાં તે વખતે લોકો ધાન્યજ મેળવવા લાગ્યા, કારણ કે માણસોના પ્રાણા અન્નના આધારે રહેલા છે.

હવે ઉજ્જવિલા અતિકાંત થતાં. વર્ષાકાલ આવ્યો અને લોકો ખાદ્ય ઉંચે જોવા લાગ્યા છતાં મેઘ વરસ્યો નહિ. એટલે ભાવિ દુર્ભિક્ષની શંકાથી લોકો ખડું ખેદ પામવા લાગ્યા. કારણ કે ધર્મ કર્મની વ્યવસ્થા સુભિક્ષને અનુસરીને થાય છે. એવામાં શ્રાવણ મહિનામાં કૃષ્ણ દ્વિતીયાના દિવસે ઉત્તર દિશામાં એક વાદળું ચડ્યું, એટલે લોકો તેની સન્મુખ જઈને વાદ્ય વગાડવા લાગ્યા તથા ગીત, નૃત્યાદિક કરવા લાગ્યા તે વખતે જાણે તેમના ભાગ્યથી આકૃષ્ટ થયો હોય તેમ મેઘ વરસ્યો. એટલે રાજાએ નિમિત્તરૂને કહ્યું કે:— ‘ તારું વચન અન્યથા થયું. માટે જેમ તેમ બોલનાર એવા તારી જીભનો હવે છેદ કરે. ’ પછી નિમિત્તરૂ બોલ્યો કે:— ‘ હે દેવ ! જેટલામાં મુને કોઈ જ્ઞાની મુનિ મળે, અને તેની પાસે હું શાસ્ત્રાર્થનો નિર્ણય કરું, ત્યાંસુધી કંઈક રાહ જુઓ. ’ પછી ખેડુતો હર્ષિત થઈને

કૃષિ કરવા લાગ્યા અને ધાર્મિક લોકો જેમ સુપાત્રે બીજા વાવે તેમ તેઓ ક્ષેત્રોમાં બીજા વાવવા લાગ્યા. તે વર્ષે અન્ય વર્ષની નિષ્પત્તિ કરતાં બમણી પેદાશ થઈ એટલે રાજા પણ પૌરજનો સહિત બહુ ઋદ્ધિવાળો થઈ ગયો.

એવામાં, કાર્તિકમાસ ઉતરતાં હેંમત સમયમાં એકદા કોઈ દેવદાસની આચાર્ય ત્યાં પધાર્યા. એટલે તે દેવદાસ તથા પૌરજનો સહિત રાજા તેમને વંદન કરવા ગયો, અને તેણે નૈમિત્તિકની ઉક્તિ અન્યથા થવાનું કારણ તેમને પૂછ્યું. આચાર્ય બોલ્યા કે:—‘હે રાજા! આજ તારા નગરમાં ધનદત શ્રેષ્ઠ અને ધનેશ્વરી તેની ભાર્યા છે. તેમને એકદા સર્વને સુખકારી એવો પુત્ર ઉત્પન્ન થયો. જેના પ્રભાવથી તમારા જેવાઓના હર્ષને માટે મેઘ વરસ્યો. એ પૂર્વભવમાં એક ભિક્ષાચર રંક હતો. એકદા કોઈક મુનિને જોઈને તેણે હર્ષથી વંદના કરી. એટલે તે મુનિએ તેને કહ્યું કે—‘હે ભદ્ર! કંઈક નિયમ લે. નહિ તો’ પણ અત્યારે તારી પાસે કંઈ તેવી સંપત્તિ નથી.’ પછી તેણે તેમની પાસે દેવવંદન વિગેરે નિયમો લીધા, અને અનુક્રમે ભાગ્યયોગે તે પણ મહર્દિક થયો, એટલે પોતાની પૂર્વાવસ્થા સંભારીને તેણે પગલે પગલે અન્ન, પાનાદિકની સત્રશાળાઓ મંડાવી અને તે વખતે તેણે રંકથી માંડીને રાજા પર્યંત એક લાખ મનુષ્યોને તથા હજારો સાધુઓને પણ સંતોષ પમાડ્યા. પછી પોતાના જીવિત પર્યંત તેણે અખંડ દાન પુણ્ય કર્યું અને તેથી આ ભવમાં સર્વ પ્રાણીઓનો આધારભૂત થયો. જો એ આજક જન્મ્યો ન હોત, તો દુષ્કાળ થાત. કારણ કે અન્ય .

દેશોમાં અદ્યજ વરસાદ થયો છે. માટે આ નૈમિત્તિક યથાર્થ-
વાદી છે, એની અવહીલના કરીશ નહિ. ' આ પ્રમાણે સાંભળી
વિસ્મિત થયેલો રાજા સૂરિમહારાજને નમસ્કાર કરીને ઘરે ગયો.
અને ત્યાં રાજાએ પેલા બાળકને અણાવીને તેનેજ
રાજા બનાવ્યો. ઔચિત્યાચરણમાં શું સજ્જનો કદાપિ
પ્રમાદ કરે ? વળી સ્મૃતિમાં પણ એવું કહ્યું છે કે—' જેના
આધારે પ્રજા સૌખ્ય અને સમૃદ્ધિ પૂર્વક પ્રવર્તે, તેજ રાજા
કહેવાય છે. ' પછી રાજા પ્રમુખ જનોએ તેનું ધર્મરાજ એવું
નામ રાખ્યું અને તે બાળરાજા તેજમાં બાળસૂર્યની જેમ
દીપવા લાગ્યો. તેની આજ્ઞા જે દેશમાં ફરતી, ત્યાં દુર્ભિક્ષ થતું
નહિ. વળી અન્ય દેશોમાં ધાન્ય વેચીને તેણે ધન મેળવ્યું. આ
પ્રમાણે ધર્મકુશળ એવા તેણે ચિરકાલ પર્યાંત શ્રીજિનશાસનની
પ્રભાવના કરી અને પ્રાંતે પ્રવ્રજ્યા આદરી ઉત્કટ તપ તપી તે
રાજા શિવસંપત્તિને પામ્યો.

॥ इति श्री उपदेशसप्तातिकायां पंचमेऽधिकारे

प्रथम उपदेशः ॥ १ ॥

द्वितीय उपदेश.

વધારે શું કહેવું, પણ જીવહયામાં તત્પર મનવાળા
મનુષ્યો ભવોભવ, સામ્રાજ્ય, આરોગ્ય, પ્રધાનરૂપ શુભ અને
જાંબુ આયુષ્ય તથા અનેક સંપત્તિઓને પામે છે. વેદ, સ્મૃતિ અને

પુરાણમાં પણ અનેક પંડિત પુરૂષો જેની પ્રધાનતા સ્વીકારે છે અને શ્રેષ્ઠતર એવા જિનાગમમાં જેનું વિશેષ રીતે પ્રતિપાદન છે, તે જીવહયાને કોણ ન માને ? વળી એમ પણ સાંભળવામાં આવે છે કે—કપોતે પોતાના મંદિરમાં આવેલ શત્રુને પણ દયાયુક્ત ચિત્તથી પોતાનું માંસ અર્પણ કરીને નિમંત્રિત કર્યો હતો.

કપોતની કથા.

મનોહર વૃક્ષોવાળા કોઈ જંગલમાં અન્યોન્ય અત્યંત અનુરાગી એવા કોઈ કપોતદંપતી વસતા હતા. એકદા તે વનમાં કોઈ જ્ઞાની સાધુ આવ્યા અને લાલ જાણીને જે દંપતિની પાસે તેમણે ધર્મદેશના આપી, તે સુનિતું વચન સાંભળીને તે વખતે તે કપોત યુગલ યથોચિત ધર્મ આચરતાં સમય ગાળવા લાગ્યું.

એકદા માઘ મહિનામાં યમ સમાન, કૂરાતમા અને હાથમાં પાશ તથા પંજર લઈને કોઈ શીકારી ત્યાં આવ્યો. તે પાપી, સ્થાને સ્થાને પક્ષીઓને બંધન કરતો જ્યાં પેલા કપોત દંપતી આનંદે રહે છે, ત્યાં આવ્યો. તે વખતે ખોરાક લેતી કપોતીને તે પાપીએ બાંધીને પાંજરામાં નાખી દીધી. અહા ! પાપીઓને શું અકૃત્ય હોય ? એવામાં હિમ સંસિક્ત અને પવનના ઝપાટાપૂવક થયેલ જળ વૃષ્ટિથી કંપતા શરીરે સાંજે તે પાપીએ પેલા વૃક્ષનો આશ્રય લીધો. અસહ્ય અને અતિશય શીતથી શરીર વ્યાપ્ત થઈ જતાં અનુક્રમે તે તદ્દન મૂર્છા પામ્યો. અહો ! પાપનું ફળ કેવું ભયંકર હોય છે ? એવામાં પંજરમાં રહેલ કપોતીએ વૃક્ષની પોલમાં રહેલ પોતાના પતિ કપોતને કહ્યું કે:—‘ હે સ્વામિન્ ! તું મારું વચન સાંભળ—આ શીકારી તારા

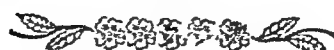
આવાસનો આશ્રય લઈને સુતો છે અને તે શીતાર્ત્ત તથા ક્ષુધાર્ત્ત છે. માટે એનું કંઈક હિત કર. ' મારી પ્રિયાને એણે બંધનમાં નાંખી છે. ' એમ ધારીને એના પર વૃથા રોષ ન કર. કારણ કે હું તો સ્વકૃતપૂર્વકના કર્મમર્મથીજ બંધન પામી છું. કહું છે કે— ' દારિદ્ર્ય, રોગ, દુઃખ, બંધન અને વ્યસન—એ આત્માના અપરાધરૂપજ દુર્ગો પ્રાણીઓને મળે છે. ' માટે મારા બંધન-નિમિત્તના દ્રેષનો ત્યાગ કરીને અને ધર્મમાં મનને સ્થિર રાખી તું એને જીવાડ અને લોજન કરાવ. ' પછી તે અગ્નિના સ્થાન આગળ જઈને બળતા કાષ્ટ અને તૃણાદિકને પોતાની શક્ત્યનુસારે ચંચુથી લઈને જ્યાં લુબ્ધક શીતથી મૂર્ચ્છિત થઈ પડ્યો હતો, ત્યાં તરત આવ્યો અને શુષ્ક પાંદડામાં તેણે તે અગ્નિ સત્વર જગાડ્યો તથા તે લુબ્ધકને તેણે કહું કે—' અહીં નિરાંતે તારૂં અંગ તપાવ. ' અહો ! પક્ષીઓમાં પણ કેવી લોકોત્તર ઉપકારબુદ્ધિ હોય છે ! પછી તે કંઈક સાવધાન થયો, એટલે પોતે તેને કહું કે—' મારી પાસે કંઈ સાધન નથી, કે જેથી તારી ક્ષુધાને હું દૂર કરું. આ જગતમાં કેટલાક હાનરોનું પોષણ કરે છે કેટલાક લાખોનું પોષણ કરે છે અને મારા જેવા દુર્ભાગી ક્ષુદ્રને પોતાનું પોષણ કરવું પણ ભારે થઈ પડે છે. જે એક અતિથિને લોજન આપવા પણ સમર્થ નથી, તો બહુ કલેશવાળા તેના ઘરમાં રહેવાથી દુઃખ શું ? માટે દુઃખના જીવિતરૂપ આ શરીરને એવી રીતે સાધું કે જેથી યાત્રકનો સમાગમ થતાં ' કંઈ નથી ' એ શબ્દો બોલવાનો ફરીવાર વખત ન આવે. માટે હે ભદ્ર ! મારું સેકાઈ ગયેલું માંસ તારે લઈ લેવું. ' એમ કહીને તે અગ્નિમાં પડ્યો અને ક્ષણવારમાં

અસ્વીકૃત થઈ ગયો. આ જોઈને લુબ્ધકે વિચાર કર્યો કે:—
 અહો ! આ કપોત કોઈ મહા દયાલુ લાગે છે, કે જેણે મારા માટે
 પોતાનું શરીર અગ્નિને સ્વાધીન કર્યું. જે મનુષ્ય પાપ કરે છે,
 તેનો આત્મા ખરેખર તેને પ્રિય નથી. કારણ કે પોતે કરેલ પાપ
 પોતાનેજ લોગવવું પડે છે. અહો ! એ કપોત મહાત્માએ પોતાનું
 માંસ આપતાં દુર એવા મને એક પ્રકારનો પ્રતિજ્ઞા આપ્યો છે.
 માટે ખરેખર હું નિષ્કરુણ (નિર્દય) જનોમાં અગ્રેસર અને એ
 કપોત દયાલુ જનોમાં અગ્રેસર થયો. આ પ્રમાણે વિચાર કરીને
 તેણે પાપના મંદિરરૂપ એવા તે પંજરને ભાંગી નાખ્યું, અને
 તે બિચારી કપોતીને મુક્ત કરીને લુબ્ધકે પોતાના ઘરે આવી
 કુટુંબનો ત્યાગ કરીને તાપસવ્રત અંગીકાર કર્યું, અને તીવ્ર તપ
 તપતાં એકદા વનમાં દવાનલ લાગતાં નિર્ભય થઈને ધ્યાનમાં
 રહેલ એવો તે દવથી દગ્ધ થઈને મરણ પામ્યો. તથા કપોતી
 પણ કપોતથી વિયોગ પામતાં સંસારથી વિરક્ત થઈ દયાધર્મમાં
 આસક્ત રહીને આયુ પૂર્ણ થતાં મરણ પામી. એ પ્રમાણે દયા-
 ધર્મમાં તત્પર એવા તે ત્રણે જીવો સ્વર્ગમાં દેવ થયા. અહો !
 દયાનું ફળ તો જુઓ !

દયાના સંલંઘમાં આ પુરાણ સંબંધી સંબંધ લખવામાં
 આવ્યો છે. માટે સર્વ જાણીએ સર્વ જાતે પર અનુકંપા રાખવી.

॥ इति श्री उपदेशसप्ततिकायां पंचमेऽधिकारे

द्वितीय उपदेशः ॥ २ ॥



તૃતીય ઉપદેશ.

જેમની ધર્મપર દૃઢતા હોય, તેમનો વ્યંતરાદિક પણ પરાલભ કરી શકતા નથી. પોતાની શુદ્ધ બુદ્ધિથી તે મહાશ્રેષ્ઠીએ શું દેવી અને દેવને નહોતા છેતર્યા ?

શ્રેષ્ઠીરાજની કથા.

દેવપુરમાં કુળને આનંદ આપનાર, કુળમાં ઉત્તમ, જિન-ધર્મમાં દૃઢ અને દેવતાઓથી પણ અશ્લોભ્ય એવો એક કોટિધ્વજ શેઠ હતો. પરંતુ પુત્રના અભાવથી કંઈક ચિંતાતુર થયેલા એવા તેને લોકો કહેવા લાગ્યા કે:—‘ નગરની અધિષ્ઠાયક દેવી સાચા પરચાવાળી છે, તેની પાસે માનતા કેમ નથી માનતો ? આ બહુ ધનથી શું ? ઈચ્છાદિ લોકોના કહેવાથી શેઠ તેમને જવાબ આપતો કે:— ‘ હે મૂર્ખ જનો ! યજ્ઞાદિકનો જો એકવાર ભક્તિ કરવામાં આવે તો તે વસ્તુ મેળવવાની ઇચ્છાથી તેમની વારંવાર માનતા કરવા જતાં આત્માને તેથી શું સુખ મળે ? કારણ કે:—‘વેષને વંદન કરનારા એવા બ્રાહ્મણો વિગેરેના તથા યજ્ઞ, રાક્ષસોના ભક્ષ્યસ્થાન એવા ભક્તો વિરત જનોથી દૂરજ ભાગતા દૂરે છે. ઇત્યાદિ તત્ત્વ વાર્તાથી પોતાના મનને દૃઢ કરતો તે શ્રેષ્ઠી બહુજનો એ કહ્યા છતાં સમ્યક્ત્વનાં દૃઢજ રહ્યો, પણ તેની પત્ની સુગંધ સ્વભાવની હોવાથી લોકકથન સાંભળીને તે દેવીના ભવનમાં આવીને ભક્તિપૂર્વક આ પ્રમાણે કહેવા લાગી:—‘ હે માત ! જો તમારા પ્રસાદથી મને પુત્રપ્રાપ્તિ થયો, તો હું ત્રણ લક્ષની તારી

પૂજા કરીશ, પછી અનુક્રમે તેને પુત્ર થયો, તેણે પોતાની માનતા ભત્તારને જણાવી અને તેના કદાચહથી તેણે પણ તેનું વચન માન્ય રાખ્યું. પછી શ્રેષ્ઠીએ ત્રણ લાખના રત્નજડિત સુવર્ણના ત્રણ પુષ્પ કરાવીને પોતાના કુટુંબ તથા પૌર જનો સહિત દેવીનાં ભવનમાં આવીને સવિસ્તર પૂજા પૂર્વક તેના ભાલ તથા બે ભુજ-પર ત્રણ પુષ્પ રાખીને તેની પૂજા કરી, અને પછી શેષાને માટે તે ત્રણે પુષ્પ લઈ પોતાની પત્નિ તથા પુત્રને આપીને દૃઢ સમ્યક્ત્વી એવો તે પોતાના ઘરે આવ્યો. આ તેનું શઠ ચરિત્ર જોઈને વિલક્ષ થયેલી વ્યંતરીએ એકાંતમાં પોતાના મિત્ર સીહ-કને પોતાનું દુઃખ જણાવ્યું કે:—‘શું કરું? આ શઠ શ્રેષ્ઠીએ પુષ્પોની પૂજા કરી અને તે યુક્તિપૂર્વક લઈ લેવાથી મને છેતરી.’ આ સાંભળીને દુઃખિત એવી તેને સીહક કહેવા લાગ્યો કે:—‘તું તો સારી રીતે છુટી ગઈ પણ મારી જે એણે કદર્થના કરી, હે મૂર્ખે! તે ચરિત્ર તો સંભાળ—

પૂર્વે એકદા એના વહાણો ગત પ્રાય થઈ ગયા તેની બહુ તપાસ કર્યા છતાં કયાંય પત્તો નજ મળ્યો એટલે તેના બંધુએ છાની રીતે મારી માનતા કરી કે:—‘જો વહાણો સહી સલામત ઘરે આવશે તો તને એક મહિષ (પાડો) આપીશ પછી મેં પણ પોતાની શક્તિ સમુદ્રનું મથન કરીને તે વહાણો લાવી આપ્યાં, એટલે બધાના મનમાં હર્ષ થયો. વળી તેમાં રહેલ વસ્તુઓનો કય વિક્રય કરતાં જે મોટો લાભ થયો તે પણ મારોજ પ્રતાપ સમજવો. પછી અવસરે એના બ્રાતાએ પણ પોતાની માનતા શેઠની આગળ કહી એટલે તે ધુર્તે તેને કહ્યું કે:—‘માનેલું હું કરીશ.’

એમ કહી એક તરૂણ મહિષ મારા મંદિરમાં લાવીને તે યોદ્ધો ક્રે:—‘ હે યક્ષ ! મારા લાઈએ જે તારી માનતા કરી છે, તે આ તારૂં લક્ષ્ય ગ્રહણ કર. ’ આ પ્રમાણે કહેતાં તે દુરાશયે તેના કંઠમાં રહેલ દોરડી નિખિડ ગાંઠ દઈને મારા ગળામાં બાંધી દીધી, અને ભક્તિના મિષથી વિવિધ રીતે પૂજાદિક કરાવી તથા તેણે મારી આગળ ભેરી પ્રમુખ વાદ્યો વગડાવ્યા, એટલે તેનોજ અવાજ સાંભળતાંજ ત્રાસ પામતા તે મહિષે મારી એવી કદર્થના કરી કે જેથી મારૂં સર્વાંગ ખરડાઈ ગયું. એક બાબુ પાપી પાડો મને ઢેકાની જેમ ખેંચવા લાગ્યો અને બીજી બાબુ કોતુકી લોકો તાળીઓ દઈને હસવા લાગ્યા. એવા અવસરમાં હાહાકાર કરતાં સેંકડો બ્રાહ્મણો દોડ્યા અને યોદ્ધો ક્રે:—‘ હે શ્રેષ્ઠીરાજ ! અમારા દેવની શામાટે કદર્થના કરો છો ? હવે તરત એને મૂકી દો, વિલંબ અમારાથી સહન થઈ શકે તેમ નથી. ’ ઇત્યાદિ બ્રાહ્મણોના બહુ કહેવા ઉપરથી તે શ્રેષ્ઠી યોદ્ધો ક્રે:—‘ હે લોકો ! અમૃતનું લોજન કરનારા દેવતાઓ અલક્ષ્યનું લક્ષણ કરતાં નથી. આવી જીવ હિંસા કરાવવી એ તેમની કીડામાત્ર છે. ’ આ પ્રમાણે કહીને લોકો અને બ્રાહ્મણોના કદાચહથી તેણે યમમુખના જેવા તે મહિષથી મને છોડાવ્યો અને પછી કેટલાક ઉત્તમ બ્રાહ્મણોએ પ્રાસાદમાં મારી મૂર્તિ સ્થાપન કરી. એ પ્રમાણે આ દુરાત્માએ મારો બધો મહિમા ધ્વસ્ત કરી દીધો. માટે કંઈ ખેદ કરીશ નહિ, પણ મૌનજ પકડી ખેસ. કારણકે મનુષ્ય જ્યારે નિઃશૂક અને નિર્દય થાય, ત્યારે તેની આગળ દેવતાઓ પણ નિર્બળ બની જાય છે. ’

આ પ્રમાણે કહીને સીહડ વ્યંતર તથા તે દેવી સ્વસ્થાન

ગયા, અને તેના કુટુંબનો દૂરથીજ ત્યાગ કરીને તે અન્યત્ર પોતાની ઇચ્છાનુસાર રહેવા લાગ્યા.

એ રીતે ચિરકાલ સમ્યક્ત્વનું પાલન કરતાં, ભદ્રક જીવોને પ્રતિબોધ આપતાં આહુત શાસનની પ્રભાવના કરતા અનુક્રમે તે શ્રેષ્ઠી બંને લોકોના અદ્ભુત સૌખ્યનું ભાજન થયો.

॥ इति श्री उपदेशसप्ततिकायां पंचमेऽधिकारे

तृतीय उपदेश ॥ ३ ॥

ચતુર્થ ઉપદેશ,

તે ધર્મમાં પણ વિચક્ષણ પુરૂષોએ યતનાને પ્રધાન કહી છે, પરંતુ તે ગૃહસ્થોને દુર્લભ છે. તથાપિ તે યતનામાં પ્રયત્ન કરતાં આસ્તિક ભવ્ય મૃગસુંદરીની જેમ સુખભાજન થાય છે.

મૃગસુંદરીની કથા.

શ્રીપુરમાં રામચંદ્ર જેવો જનવત્સલ એવો શ્રીષેણ નામે રાજા હતો, તેને બાણે બીજો ઇંદ્રજ હોય તેવો દેવરાજ નામનો પુત્ર હતો. જન્મથી તેના અંગમાં દુષ્ટ કોઠરોગ થયો હતો, તેના અનેક પ્રતિકાર કર્યા, પણ તે બધા વિફલ ગયા એમ કરતાં સાત વર્ષ થઈ ગયા, એટલે એક દિવસે રાજાએ નગરમાં બધા લોકોને પટલ વોષણાથી બંદીર કર્યું કે:—‘ પંડિત કે અપંડિત—જે કોઈ મારા પુત્રનો રોગ દૂર કરશે, તેને અર્ધ રાજ્ય આપવામાં આવશે.

હવે તે નગરમાં યશોદત્ત વ્યવહારીની લક્ષ્મીવતી નામે

સુતા હતી. તે ધર્મમાં તથા વિશેષ રીતે શીલમાં બહુ તત્પર હતી. તેણે પોતાના શીલની પરિક્ષા કરવા પટહને અટકાવીને પોતાના હસ્તસ્પર્શ માત્રથી કુમારને સ્વસ્થ કર્યો. પછી હાથી, અશ્વ અને રથના દાન પૂર્વક કુમારની સાથે તેનો વિવાહ મહોત્સવ થયો, અને અવસરે તે કુમારને રાજ્યાસન પર બેસારીને રાજ્યે પ્રવ્રજ્યા અંગીકાર કરી. કારણ કે ઉત્તમ જનો અવસરને જાણનારા હોય છે. પછી સ્વર્ગના રાજ્ય સમાન સામ્રાજ્ય ભોગવતાં દેવરાજે એકદા ત્યાં પધારેલા પુટ્ટિલાચાર્યને વંદન કરીને પૂછ્યું કે:— ‘હિ પ્રભો ! મને સાત વર્ષ વ્યાધિ શાથી થયો અને તે એ રાણીના માત્ર કર સ્પર્શથી શી રીતે નાશ પામ્યો,’ એટલે ગુરૂ બોલ્યા કે:—

‘હિ રાજન્ ! પૂર્વ ભવમાં તું દેવદત્ત નામે શ્રેષ્ઠ હતો. તેને ગોપા, દેપા, સિવા અને શૂરા એવા નામના તથા મિથ્યાત્વથી વાસિત એવા ચાર પુત્રો હતા, તેમાં કપટી શ્રાવક થયેલ એવા ચોથા પુત્રને તેં મૃગસુંદરી નામની શ્રાવકસુતા પરણાવી. તે મૃગસુંદરીને બાહ્ય વયથી એવો અભિગ્રહ હતો કે:— ‘જિનેશ્વર દેવને પૂજીને અને સંયતોને પ્રતિલાભીને એક (વખત) ભોજન કરવું, અને રાત્રે કદાપિ ન જમવું.’

એકદા તે બધા એકત્ર થઇને ક્રોધથી તે નવોઢાને કહેવા લાગ્યા કે:— ‘અરે ! પાખંડને છોડીને ગૃહાચાર પ્રમાણે ચાલ. જિનની તારે પૂજા ન કરવી, સાધુઓને દાન ન દેવું અને રાત્રે તારે ભોજન કરવું, જો એમ ન કરે, તો અમારા ઘરમાંથી ચાલી જા.’ આમ કહ્યા છતાં તે પરમ શ્રાવિકા તેવું મનથી પણ કદી ઇચ્છતી ન હતી. એમ કરતાં તેને ત્રણ ઉપવાસ થયા, એટલે તેણે શ્રીગુરૂને પૂછ્યું કે:— ‘હિ વિભો ! હું શું કરું ? એમનાથી હું ધર્મ (સાધન) કરી શકતી નથી.’ આથી શ્રીસિદ્ધાંતમાં જોઇને

શ્રીગુરુએ તેને કહ્યું કે:—‘ હે ભદ્રે ! પાંચ તીર્થ અને પાંચ સાધુ-
ઓને વંદન તથા પ્રતિલાભતાં જેટલું પુણ્ય થાય, તેટલું પુણ્ય
ચુલાપર છિદ્રરહિત વિશાલ વસ્ત્રનો ચંદરવો બાંધવાથી પ્રાપ્ત થાય
થાય છે.’ આ પ્રમાણે સાંભળીને તે ઘરે ગઈ અને તેજ પ્રમાણે
કરવા લાગી.

એવામાં એકદા તે ચંદરવો જોઈને સસરાએ તે મૃગસુંદ-
રીને કહ્યું કે:—‘ હે પાપે ! પોતાના કુળનો નાશ કરવા આ શું
કાર્મણ માંડ્યું છે ? ’ તે બોલી કે:—‘ જીવદયા પાળવાનોજ આ
પ્રયત્ન છે.’ પણ તેનું વચન ન માનતાં તેના પતિએ તે ચંદરવો
બાળી નાખ્યો. એટલે પુનઃ તેણે તે બાંધ્યો અને તેણે તેવીજ રીતે
બાળી નાખ્યો. એમ સાત વાર તેણે બાંધ્યા અને તે દુરાત્માએ
તેવીજ રીતે તે બાળી નાખ્યા. પછી ક્રોધ લાવીને સસરાએ તેને
કહ્યું કે:—‘ તું તારા પિતાને ઘેર જા.’ એટલે તે બોલી કે:—‘ હું
તમારે ઘેર કુટુંબની સાથે આવી છું, માટે તેવીજ રીતે જો મને
મોકલો, તો હું જાઉં. અન્યથા હું શી રીતે જાઉં ? ’ આથી તેને
મોકલવા માટે બધા તૈયાર થયા, અને માર્ગમાં એક પોતાના
સંબંધીએ તેમને જમવાને નોતર્યા. પણ રાત્રે વહુના ન જમવાથી
સસરા વિગેરે પણ ન જમ્યા. એટલે તૈયાર થયેલ રસોઈ તેનાજ
કુટુંબે વાપરી, અને તે વિષમિશ્રિત આહાર હોવાથી તે સમસ્ત
કુટુંબ મરણ પામ્યું. પછી પ્રાતઃકાલે સસરા વિગેરે સસંબ્રમ થઈને
જેટલામાં જુએ છે, તેટલામાં તેમાં પતિત થઈ મરણ પામેલ સર્પ
તેમના જોવામાં આવ્યો. આથી તેમણે નિશ્ચય કર્યો કે:—‘ ખરે-
ખર ! ઉંચે ભ્રમણ કરતાં એ ધૂમાડાથી વ્યાકુલ થઈને ધાન્યની
ચાળીમાં પડ્યો હશે. અહા ! ચંદ્રવાના અભાવથી આ મોટો
અનર્થ થયો. માટે આ વહુના પ્રસાદથીજ આપણે નવો અવતાર

પામ્યાં. આ પ્રમાણે ભક્તિથી નમ્ર થઈને વધૂને એક દેવી સમાન માની અને તેનો સત્કાર કરી પોતાના ઘરે તેને લઈ ગયા. અને તે બધાએ શ્રાવકપણું અંગીકાર કર્યું. એટલે મૃગસુંદરીએ તેમને શિખામણ આપી કે:—‘ હે ભદ્રે ! પાંચ સો વ્યાધિ જેટલું પાપ કરે, તેટલું પાપ અંદ્રવો ન બાંધવાથી ગૃહસ્થોને લાગે છે—એમ જ્ઞાનીઓ કહી ગયા છે.’ ઇત્યાદિ તેની શિક્ષા (પાળવા) માં તે ચિરકાલ સાવધાન રહ્યા.

હવે મૃગસુંદરીનો જે પતિ હતો, તે તું અહીં રાજા થયો છે, અને મૃગસુંદરીનો જીવ હતો, તે આ તારી પત્ની થઈ છે, જેના પ્રભાવથી તારો સાત વર્ષનો વ્યાધિ ગ્રાહ્યો ગયો. સાતવાર અંદ્રવો બાળવાથી તને સાત વર્ષ કોઠ રોગ રહ્યો. કારણ કે પૂર્વે જે કર્મ કર્યું હોય, તે અન્યથા ન થાય.’

આ પ્રમાણે સાંભળીને તે દંપતી ભતિસ્મરણ પામ્યા અને પોતાના પુત્રને રાજ્યપર બેસારી દીક્ષા લઈ અનુક્રમે સહગતિના ભાજન થયા.

इति जीवदयाफलं बुधाः । अवधार्य स्वहृदि स्पृहा यदि ।
शिवशर्मणि तद्विधीयतां, स्वमनस्तत्र कठोरतोज्झिताः ॥१॥

હે બુધજનો ! આ પ્રમાણે જીવદયાનું ફળ પોતાના અંતરમાં અવધારીને જો તમારે શિવસુખની ઇચ્છા હોય, તો તમે સરલ થઈ તેમાંજ મનને જોડી દો.

॥ इति श्रीउपदेशसप्ततिकायां पंचमेऽधिकारे
चतुर्थ उपदेशः ॥ ४ ॥

પંચમ ઉપદેશ

સજ્જન પુરૂષોએ હિતકર અને જરૂર પડતું વચન પણ વિચારીનેજ બોલવું, કર્કશ વાક્ય તો કદાપિ બોલવુંજ નહિ. માત્ર એકવાર કઠોર વચન બોલવાથી પણ માતા અને પુત્રની કેવી માઠી દશા થઈ ? ‘ તારા હાથ પગ છેદી નાખું અને લોચન કહાડી લઉં. અરે ! તું મરતો કેમ નથી ? ’ ઇત્યાદિ વાક્યો દુર્ગતિના માર્ગમાં લઈ જનારાં છે, માટે તે ત્યાજ્ય છે.

માતા અને પુત્રની કથા.

તામ્રમય કિલ્લાથી સુશોભિત એવી તામ્રલિપ્તી નગરીમાં રતિસાર નામે શેઠ હતો, તેની બંધુલા નામે પત્ની હતી. તેમને સ્વભાવે ઉદ્દભટ વેષ—રાખનારી અને સર્વ સુવર્ણના આભરણ પહેરનારી એવી બંધુમતી નામની સુતા હતી, તે શેઠને અત્યંત વલ્લભ હતી. એકદા શ્રેષ્ઠીએ તેને કહ્યું કે:—“ હે વત્સે ! ઉદ્દભટ વેષ ન રાખ. આપણુ વણિકોને તેવો વેષ શોભે નહિ. ’ આમ કહ્યા છતાં તે માનતી ન હતી.

એકદા ભૃગુપુરથી ત્યાં વ્યાપાર કરવા આવેલ બંધુદત્ત મોટા ઉત્સવપૂર્વક તેને પરણ્યો. અને વધારે લાલને માટે તેને ત્યાંજ મૂકીને વહાણપર બેસીને તેણે રત્નદ્રીપતરક સમુદ્રમાં પ્રયાણ કર્યું. પછી કેટલોક માર્ગ અતિકાંત કરતાં કલ્પલથી આઘાત પામી તેનું વહાણ એક ક્ષણવારમાં લાંગી ગયું. એવામાં બંધુદત્તના હાથમાં એક ફલક (પાટીયું) આવી જવાથી તે સમુદ્ર તરવા લાગ્યો અને વાયુથી પ્રેરાઈને તટપર પહોંચ્યો. અને ત્યાં ઉદ્ધૃત

લોચનથી જેટલામાં દિશાઓને જુએ છે, તેટલામાં તેજ નગરના ઉદ્યાનમાં પોતાને પ્રાપ્ત થયેલો જોયો. અને વિચારવા લાગ્યો કે:— ‘અહો ! દૈવની ગતિ કેવી વિચિત્ર છે ? જ્યાં માણસો લજ્જા પામે, તે શ્વશુર ભવનમાં આવી સ્થિતિથી હું કેમ જઈ શકીશ ? કંઈ છે કે:—

“ સ્ત્રી પીહર નર સાસરડ, સંજમીયાં સહવાસ ।

ए त्रिएहइ अलखामणां, जइ को करइं तपास ” ॥૧॥

અહો ! પ્રાણીઓ પર અણુધાર્યાં સુખ અને દુઃખ આવી પડે છે. માટે કલેશના હેતુભૂત આવી ચિંતા કરવાથી સર્થ. ’ આ પ્રમાણે વિચાર કરીને તે એક દેવકુલમાં રહ્યો અને કોઈ માણસ દ્વારા પોતાના સસરાને ઘેર આગમનના ખબર જણાવ્યા. મનને સંતાપ કરનારી પોતાના જમાઈની તેવી વાત સાંભળીને ‘ અહો ! એ શું ? ’ એમ ઉંચા અવાજે બોલતો શ્રેષ્ઠી તરત ઉઠ્યો, અને જેવામાં તેની પાસે જવા આલ્યો, તેવામાં સૂર્ય અસ્ત થયો, એટલે અસુર ઇર્ષ જવાથી કુટુંબીઓએ જતાં અટકાવ્યો, તેથી પોતાના ઘરેજ રહ્યો. પછી ગ્રાહ્યમુહૂર્ત થતાં અવસરને ઉચિત વસ્ત્ર, આભરણાદિક લઈને તે પોતાના જમાઈને મળવા આલ્યો; અને સુવર્ણ-કંકણના સમૂહથી ભુજલતાને સુશોભિત કરી પોતાના પતિને જોવાને ખંધુમતી પણ તેની સાથે નીકળી. તે વખતે તે શ્રેષ્ઠીની પાછળ જતી હોવાથી કોઈ લુબ્ધ ચોરે તેના ખંને હાથ કાપી નાખ્યા. પૂર્વકૃત કર્મ અન્યથા થતું નથી. એવામાં ત્યાં કોલાહલ થયો, એટલે કોટવાલ વિગેરે આવ્યા અને ખબર મેળવીને તેઓ ચોરની પાછળ દોડ્યા. પછી શ્રેષ્ઠી ત્યાંથીજ પાછો ઘેર ગયો, ત્યાં લોકો એકત્ર થયા અને ‘ કર્મની દશા ન્યારી છે ’ એવી શોકકથા કરવા લાગ્યા.

હવે ચોર પણ રાજપુરૂષોને પાસે આવેલા જોઈને ખડાવરો
 બની જ્યાં પ્રથમથી જ પેલો શેઠનો જમાઈ સુતો છે તે દેવકુલમાં
 આવ્યો. ત્યાં દાગીના તેની પાસે મુકીને મુઠી વાળીને નાઠો.
 એવામાં તે વસ્તુઓ જોવાથી મુલતોએ બાણ્યું કે—‘આજ ચોર
 છે.’ એમ ધારીને વિલંબ અને વિચાર વગર તેઓએ તેને શૂળી-
 પર ચડાવી દીધો. અહા ! કર્મથી કયા જંતુઓ વિલંબના નથી
 પામતા ? પછી શ્રેષ્ઠી પુત્રીનો શોક કરીને જેવામાં તેની પાસે
 આવ્યો, તેવામાં જેમ પેલા બલોએ તેને મૂકી દીધો, તેમ પ્રાણીએ
 પણ તેને મૂકી દીધો. તેને તેવી અવસ્થામાં જોઈને શ્રેષ્ઠીએ દુઃખિત
 થઈ રાજપુરૂષોને કહ્યું કે—‘અરે ! તમોએ આ શું કર્યું ? મારા
 જમાઈનેજ તમે મારી નાખ્યો. પછી તેનું સ્વરૂપ બાણુવામાં આવતાં
 તેના દુઃખથી દુઃખિત થતા અને ભવસ્થિતિનો વિચાર કરતા
 તેઓ સર્વે પોતપોતાના ઘરે ગયા. ત્યારથી પોતાની પુત્રી અને
 જમાઈની તેવી કર્મ વિચિત્રતા (વિષમતા) જોઈને રતિસાર શ્રેષ્ઠી
 ધર્મપરાયણ થયો.

એકદા ત્યાં સુયશા નામના ચતુર્જ્ઞાની પધાર્યા. તેમની
 દેશના સાંભળીને શ્રેષ્ઠીએ તે બંનેનો પૂર્વભવ પૂછ્યો. એટલે
 જ્ઞાની બોલ્યા કે—

પૂર્વે શાલિગ્રામમાં કુટુંબાદિકથી રહિત કોઈ દરિદ્ર સ્ત્રી
 પોતાના પુત્ર સાથે રહેતી હતી. તે સ્ત્રી કોઈ શ્રેષ્ઠીના ઘરે ઉદર
 નિર્વાહને માટે ધરકામ કરતી અને તેનો પુત્ર વાછરડાં ચારતો
 હતો. એકદા તે પુત્ર વાછરડાં ચારીને ઘરે આવ્યો, તે વખતે
 તેની માતા ક્યાંક કાર્યવ્યય હોવાથી ઘરે આવી ન શકી. એવામાં
 બહુ વાર થઈ અને તે બાલક બહુ ક્ષુધિત હતો. તેથી તે દેર

આવી કે તરત તે આવેશમાં આવીને કહેવા લાગ્યો કે:—‘અરે ! રંડા ! શું આટલો બધો વખત તું શૂળીપર ચઢી હતી ? હે મૂર્ખે ! ક્ષુધાપીડિત મને શું તું બાણતી ન હતી ? ’ એટલે તેજ પ્રમાણે તે પણ સામે કહેવા લાગી કે:—‘ શું તારા બંને હાથ કપાઈ ગયા હતા ? કે અહીં સીકાપર તારા માટે તૈયાર કરીને રાખેલ લોજન પણ તું લઈ ન શક્યો. હે મૂર્ખ ! એમાં પરવશ પણામાં રહેલી એવો મારો શો દોષ છે ? ’ આ પ્રમાણે તે વખતે તે બંનેએ મોટો કલહ મચાવી મૂક્યો. તે પાપકર્મને આલોબ્યા વિના તે માતા અને પુત્ર મૃત્યુ પામી તારી પુત્રી અને જમાઈ થયા. એ બધું સંસારનું નાટક છે. જે જેવું વચન બોલે તે તેવું ફળ લોગવે છે. માટે હે શ્રેષ્ઠિન્ ! કહેવાનો સાર એ છે કે—વચનનો સંવર કરવો. ’ વગર વિચાર્યું સહસા બોલી નહીં નાંખવું.

આ પ્રમાણે સાંભળીને તે સાધુની પાસે વ્રત લઈ રતિસાર શ્રેષ્ઠી સુખભાજન થયો અને તે બંને અનંત સંસાર ભગ્યા. એમ સમજીને મધુર અને પરિમિત વચન પણ વિચારીનેજ બોલવું.

॥ इति श्री उपदेशसप्ततिकायां पंचमऽधिकारे

पंचमे उपदेशः ॥ ५ ॥



ષષ્ઠ ઉપદેશ.

જે ત્રિકાલ પૂજા અને યેવાર પ્રતિક્રમણ એમ દરરોજ પાંચ વેળાને લગ્નની જેમ ચરિતાર્થ (સાર્થક) કરે છે તે ઉત્તમ પ્રાણી જગતસિંહની જેમ બુધ જનોને પ્રશંસનીય થાય છે.

જગતસિંહ શ્રેષ્ઠીની કથા.

યોગિનીપુરમાં શ્રી પીરોજ પાદશાહની સભાના શૃંગાર રૂપ એવો જગતસિંહ નામે શ્રેષ્ઠી હતો. સમસ્ત નગરમાં સત્યવાદીઓમાં તે એકજ પ્રખ્યાત હતો. કારણ કે અસત્યવાદી પ્રાયઃ પ્રતિષ્ઠા પામતો નથી. કદાચ અગ્નિ શીતલ થાય અને પવનમાં સ્થિરતા આવે, તથાપિ તેમાં અસત્યવાદિતા કદાપિ સાંભવે નહિ. આવી તેની ખ્યાતિ સાંભળીને પરીક્ષા કરવાના ઈરાદાથી રાજાએ તેના મર્મને જાણનારા હુજીનોને એકાંતમાં પૂછ્યું કે:— ‘અરે ! કહો, એ શ્રેષ્ઠી પાસે કેટલું ધન છે.’ એટલે દ્રોહતત્પર એવા તેઓ બોલ્યા કે:— ‘સિતેર લક્ષ છે.’ હવે કેટલાક દિવસ પછી રાજાએ તેને પૂછ્યું કે:— ‘તારી પાસે કેટલું ધન છે ?’ એટલે તે બોલ્યા કે— ‘વિચાર કરીને જવાબ આપીશ, પછી બીજે દિવસે ઘરવખરી સાંભાળીને તેણે કહ્યું કે:— ‘હિ રાજન્ ! મારે ચોરાશી લક્ષ પ્રમાણુ ધન છે. પૂર્વોક્ત સંખ્યાથી અધિક કહેતાં તે સત્યવાદીજ ઠર્યો. કારણ કે પોતાના દ્રવ્યની સંખ્યામાં સ્તોક શબ્દ સત્ય સૂચક થાય છે. પછી સંતુષ્ટ થયેલ રાજાએ સોળ લક્ષ ધન આપીને તે શ્રેષ્ઠીને કોટીધ્વજ બનાવ્યો. અહો ! સત્યનું કેટલું બધું ફળ ?

એકદા રાજાએ પોતાના ભંડારમાંથી મંગાવીને સૂર્ય સમાન રંગકતું એક રત્ન તેને બતાવ્યું અને કહ્યું કે:—‘ આ રત્ન જેવું બીજું રત્ન શું પૃથ્વી પર હશે ? ’ એટલે તે બોલ્યો કે:—શુ વસુધા ઉપર જે પાદસાહ હોય ? ’ આવા તેના વચનથી રાજિત થઈને તે ઉત્તમ રત્ન તેને આપણને માટે આપ્યું. કારણ કે જ્યાં બંનેની પ્રીતિ સ્થિર હોય, ત્યાં ભેદ ન હોય. આ પ્રમાણે પ્રીતિપૂર્વક તે બંનેનો કેટલોક કાળ ગયો, એવામાં એકદા કોઈક કારણથી રાજા તેના પર રૂષ્ટમાન થયો. કારણ કે સંપત્તિ અને આપત્તિ મહંતજનોને હોય છે. પણ ચંદ્ર અને સુરના દૃષ્ટાંતથી નીચ જનો સદા તેવીજ સ્થિતિમાં હોય છે. મસ્તક પર પુષ્પાલરણ અને મુંડન પણ કરવામાં આવે છે, પરંતુ બ્રૂકુટીના કેશમાં કદી ચંચ કે અપચંચ થતો નથી; પછી રાજાએ તે શ્રેષ્ઠીને કેદખાનામાં રાખ્યો અને તેની રક્ષા કરવા પોતાનો એક સેવક ત્યાં નીમ્યો તે વખતે શ્રેષ્ઠીને પાંચ વેળા ધર્મનો વ્યતિક્રમ થાય એજ હુલાવા જેવું હતું, પણ રાજાના નિગ્રહની પરતંત્રતાથી તેને કંઈ ખેદ ન હતો. પછી તે સેવકને એકાંતમાં સુવર્ણનો ટકો અપાવીને તે પોતાની ધર્મવેળા સાધતો હતો. કારણકે લવની વૃદ્ધિ કરનાર લક્ષ્મી તો લવોલવ પ્રાપ્ત થાય છે, પણ જેનાથી સંસારનો ક્ષય થાય એવી ધર્મસામગ્રી મળવી હુર્લેલ છે. એ પ્રમાણે એકવીશ દિવસ સુવર્ણના ટકા અપાવીને તેણે પોતાની ધર્મસાધના કરી. કારણ કે ધર્મનો આદર એ ખરેખર લોકોત્તર હોય છે. પછી બાદશાહ પ્રસન્ન થયો એટલે પોતાના અંગના વિભૂષણો અને પાંચ વર્ણના વસ્ત્રો તેને પાંચ વાર પહેરાવ્યા. પછી વિવિધ વાદ્યો અને ઘણા લોકો સહિત શ્રેષ્ઠી અર્થી જનોને ઇચ્છિત દાન આપતો. પોતાના ઘરે આવ્યો પછી અનુક્રમે ત્યાં કારાગૃહમાં શૂન્યતા થઈ.

એટલે તે રક્ષક પણ રાજા વિગેરેથી લય પામીને સુવર્ણટકા
 ‘આ લ્યો’ એમ કહીને આપવા લાગ્યો. એટલે શ્રેષ્ઠીએ તેને
 કહ્યું કે:—‘હા ભદ્ર ! એ તને મેં સમર્પણ કર્યા છે માટે યથેચ્છ
 તેનું દાન કર, ભોગવ અને સુખી થા. કારણ કે તારા પ્રસાદથી
 મેં ધર્માનુષ્ઠાન કર્યું. કોટી સુવર્ણ આપતાં પણ ધર્મ સંબંધી એક
 ક્ષણ પણ દુર્લભ છે. વળી તેમાં પણ મેં એક ટકો આપતાં પાંચ
 વેલા કૃતાર્થ કરી, તેથી તને અધિક દ્રવ્ય આપવું જોઈએ, પણ
 લેવાય કેમ ?’ એમ કહી પુનઃ દાનપૂર્વક તેને વિસર્જન કર્યો.
 સત્જનો શું ઉચિતાચારમાં કદી પ્રમાદ કરે ?

હવે એકઠા સેવાને માટે આવેલ સપાદલક્ષ રાજાએ
 બાદશાહની આગળ ચંદનનો કટકો અને બે નિર્મલ મોતી આ
 બે વસ્તુ ભેટ મૂકી:—તે સ્વરૂપ જોઈને રાજા ક્ષણ ભર રૂઝમાન
 જેવો થઈ ગયો. તે વખતે સભાસદો પણ બધા જોવા લાગ્યા પણ
 કોઈ પરીક્ષા કરનાર ન હતો, એટલે સપાદલક્ષ પણ વિચારવા
 લાગ્યો કે:—‘અહો ! આ લોકો મૂર્ખ લાગે છે.’ એવામાં
 જગતસિંહ બોલ્યા કે:—આ બંને વસ્તુ અમૂલ્ય છે. તેમાં પ્રથમ
 આ ચંદનના કટકાનું માહાત્મ્ય સાંભળો—અગ્નિમાં તપાવતાં એ
 સોમણના પ્રમાણ જેટલું થાય છે તથા એના મધ્યસ્થ ખંડમાં
 પણ હિમકણ જેવું તેલ છે. વળી છ માસના જવરથી પીડાતા
 માણસને આ ખંડ ઘસીને પીવરાવવામાં આવે તો તે પ્રાણી
 નિરોગી થાય છે. હા દેવ ! હવે આ બે મોતીનું પણ કોતુક સાંભળો
 એ બંનેમાંથી ગમે તે એક વેચીને બીજાને ગાંઠમાં બાંધેલ હોય,
 તો ઉત્સુક મિત્રની જેમ તે સંધ્યા થતાં અવશ્ય આવીને ભેગા
 મળે છે. ’ આ પ્રમાણે સાંભળીને રાજાએ વિસ્મય પામીને પરી-
 ક્ષા કરી. પછી શ્રેષ્ઠીને તેણે પૂછ્યું કે:—‘આ બધું તે શી રીતે’

બાણુ ? ' તેણે કહ્યું કે:—‘ બાહ્ય વયથી વસ્તુપરિક્ષાનો મેં અભ્યાસ કર્યો છે. આ પ્રમાણે પુણ્યના વિષયમાં પણ સજ્જનોએ પરીક્ષા કરવી ઉચિત છે. બાહ્ય વસ્તુ પરીક્ષામાં મારું મન પ્રસન્ન થતું નથી. ’ આવી તેની ઉક્તિથી પ્રસન્ન થયેલ રાજા સપાદલક્ષીય ભૂપ પર અત્યંત પ્રસન્ન થયો.

એ રીતે ચાવજીવ ધર્મની પાંચ વેલા આરાધતાં અને સત્ય ભાષા બોલતાં જગતસિંહ શ્રેષ્ઠીએ ચિરકાલ પર્યંત શ્રી જિન-શાસનનો ઉદ્યોત કર્યો.

॥ इति श्री उपदेशसप्ततिकायां पंचमेऽधिकारे

षष्ठ उपदेश ॥ ६ ॥

સપ્તમ ઉપદેશ:

જગતસિંહનો પુત્ર ધન્ય, કે જેને શ્રેષ્ઠીએ અટકાવ્યા છતાં જેણે પોતાના પિતાના શપથ (સમ) ન બાધા. કારણ કે મહત્કાર્યમાં પણ શ્રી દેવ, ગુરુ, રાજા, અને માતા પિતા વિગેરેના શપથ ન લેવા જોઈએ.

મદનસિંહની કથા.

જગતસિંહનો ચતુર એવો મદનસિંહ નામે પુત્ર હતો, તે પણ લોકમાં તેવીજ ખ્યાતિ પામ્યો હતો. ખુરસાણની સભામાં રહેનાર કોઈ ધનદ નામના વસ્તુપતિની સાથે તેના પિતાની મિત્રાઈ હતી. તે એકદા જગતસિંહ સ્વર્ગે ગયા પછી યોગિનીપુર (દિલ્હી) માં વ્યવસાયને માટે આવ્યો અને તેના ઘરે પણ ગયો. ત્યાં કુટું-

બના ક્ષેમ, નિર્વાહ અને વ્યવસાઈ પૂછતાં તેની જેમ તેના પુત્રની સાથે પણ તેવો વ્યવહાર (મિત્રાઈ) કરવાની તેની ઇચ્છા થઈ. પરંતુ તેની પરીક્ષા કરવા તેણે આવો ઉપાય કર્યો. કારણ કે ઐહિક અને આમુખિક કાર્યમાં સજ્જનોને પરીક્ષા કરવી ઘટિત છે. કહ્યું છે કે:—

“સોનડં ચંદન સપ્પુરિસ, આપણ પીડ સ્ખમંતિ ।

કુલકસવટ્ટં જાણીયઈ, જઈ ઉપકાર કરંતિ” ॥ ૧ ॥

ઇત્યાદિ વિચાર કરી માયાથી કૃત્રિમ આદર બતાવીને તેણે મદનસિંહને કહ્યું કે:—‘ માઈ તારા પિતાપાસે જે લેણું છે તે આપ. કારણ કે તારા પિતા સાથે મેં ઘણા વરસ સુધી વ્યવહાર ચલાવ્યો, તેથી લેણુદેણુ પણ બહુ થતી હતી. તેમાં સો ઘોડા આપીને પહેલાં લેણું તેણે વાળ્યું એટલે હું આનંદથી સ્વસ્થાને ગયો, પરંતુ શેષ લેણું અહીં રહી ગયું છે. ’ આ સાંભળીને તે બોલ્યો કે:—‘ કેટલુંક લેણું છે ? ’ એટલે તે બોલ્યો કે:—‘ બુના નાણાનું બત્રીશ હજારનું લેણું રહ્યું છે. જો યોગ્ય લાગે, તો આપો. ’ તે પુત્ર બોલ્યો કે:—‘ પિતાનું દેવું અલ્પ કે બહુ વહીમાં જોઈને મેં તેમના નામ પ્રાણે બધાને ચૂકવી દીધું છે. પરંતુ ત્યાં તમાઈ નામ ક્યાંય પણ મારા જોવામાં ન આવ્યું. તો લિખિત મળ્યા વિના મારે તમાઈ લેણું પણ શી રીતે દેવું ? ’ એટલે પુનઃ શ્રેષ્ઠી અંતરમાં પ્રસન્ન છતાં રૂષ્ટમાન થઈને બોલ્યો કે:—‘ અરે ! પિતાનું લેણું પુત્ર આપે, તેમાં વિચાર શો કરવાનો હતો ? ’ તેણે કહ્યું કે:—‘ હે શ્રેષ્ઠિન ! તમે આ વૃથા પ્રયાસ શાને કરો છો ? સાક્ષી કે લિખિત વિના લેણું મળશે નહિ. ’ એટલે શ્રેષ્ઠી પાદ-

શાહની સલામાં ગયો અને પાદશાહ પાસે તેણે અરજ કરી કે:—
 ‘ હે દેવ ! જો અહીં એકાંત થાય તો, કંઈક વિજ્ઞપ્તિ કરવાની છે. ’
 પછી રાજાએ સહુને દૂર કર્યા, એટલે તે બોલ્યો કે:—‘ મહન-
 સિંહની પરીક્ષા કરવા મેં તેની સાથે કૃત્રિમ કલહ મચાવ્યો છે.
 માટે જેમ તેમ બોલતાં મને તમારે દોષ ન દેવો. ’ આ પ્રમાણે
 ખાનગી કહીને પછી તે સર્વ સમક્ષ બોલ્યો કે:—‘ હે રાજા !
 જગતસિંહની પાસે મારું પ્રથમનું કંઈક લેણું રહી ગયું છે, તે આ
 તેનો પુત્ર આપતો નથી, માટે શું કરવું ? તે ફરમાવો. ’ એટલે
 રાજાએ બોલાવેલ મહનસિંહ સલામાં આવી પોતાનું સ્વરૂપ
 નિવેદન કર્યું અને તે શ્રેષ્ઠીએ પણ પોતાનું સ્વરૂપ નિવેદન
 કર્યું, એટલે બંનેનો વિવાદ ચાલ્યો. પછી ધનદ નામના
 વસ્તુપતિએ કહ્યું કે:—‘ જો તારા પિતાની પાસે મારું
 લેણું ન હોય, તો બધાના દેખતાં તું શપથ લે. ’
 આથી તે ધૈર્ય પૂર્વક બોલ્યો કે:—‘ પિતાના શપથ હું લેવાનો
 નથી. ભલે તમે તમારું લેણું આ મારું સર્વસ્વ લઈ લ્યો. ખત્રીશ
 હબ્બરમાં હું મારા પિતાને કેમ વેચું ? કે જે કોટી ઉપકારોથી
 પણ દુષ્પ્રતિકાર્ય (બદલો ન વાળી શકાય તેવા) છે. કેટલાક
 મૂર્ખ જનો પોતાના પિતાના ગણા અને રૂઢિરના શપથ લે છે,
 તેમની ગતિ કેવળી જાણે કહ્યું છે કે:—

“ સચ્ચેણવિ અલીણવિ, ચેઙ્ગસમ્મં કરેહ જો મૂઢો ।

હણિજ્ઞાણ બોહિવીયં, અણંતસંસારિઓ હોઈ ” ॥૧॥

‘ જે મૂઢ પ્રાણી ચૈત્યના સાચા કે ખોટા શપથ કરે છે,
 જે પોતાના સમ્યક્ત્વને હણીને અનંત સંસારી થાય છે.

આ પ્રમાણે તેનું કથન સાંભળીને સર્વ સભાસદો વિસ્મય પામીને તેની પ્રશંસા કરવા લાગ્યા અને તે વસ્તુપતિ પણ બોલ્યા કે:— હે વત્સ ! તું ભાગ્યવંતમાં મુગટ સમાન છે. જેનું આવું તો સાહસ છે. મારું લોણું કંઈપણ નથી, માત્ર મારે પરીક્ષા કરવી હતી. કારણ કે સિંહનું બચ્ચું સિંહ જેવું જ થાય. સૂર્યથકી અંધકારની વૃષ્ટિ ન થાય અને ચંદ્ર થકી અંગારાની વૃષ્ટિ ન થાય.’ આ પ્રમાણે તેની પ્રશંસા કરીને તેને જગતસિંહના શ્રેષ્ઠ સ્થાને સ્થાપીને તે તેની સાથે પણ પૂર્વ મિત્રની જેમ વ્યવહાર ચલાવવા લાગ્યો. આ પ્રમાણે મદનસિંહ પણ રાજા વિગેરેને વલ્લભ થઈ પડ્યો. કારણ કે જ્યાં જ્યાં ગુણાદર છે, ત્યાં ત્યાં પ્રતિષ્ઠા વધે છે.

એકદા ભેદપાટથી આવેલ કોઈ પોલાક નામના મહાવૈદ્યે ખિન્ન થયેલ પાદશાહને સ્વસ્થ કર્યો. ત્યારથી રસાંગ વેદી, શાસ્ત્રજ્ઞ અને વિવિધ ઔષધોના યોગને જાણનાર એવો તે વૈદ્ય રાજા વિગેરેને માન્ય થઈ પડ્યો. તે બલિષ્ઠ નવ શ્રીફળને એકી સાથે ભાંગતો હતો અને સોપારીને તેની અંદર તે પોતાના અંગુઠા વતી દાખી દેતો હતો. તેજ પ્રમાણે જાનુ (ઢીંગણ) ના મધ્યમાં સોપારી રાખી તથા જે ખભા પર તે રાખીને ચિબુક (દાઢી) ના ભાગથી દબાવીને તેને ચુર્ણ કરી નાખતો હતો.

એકદા તે મહાજનની સાથે શાળામાં ગયો. ત્યાં કોઈ બ્રહ્મચારીનું વ્યાખ્યાન ચાલતું હતું, એટલે તે બેઠો. તે અધિકારમાં ક્યાંક તેણે તપાગચ્છની અવહીલના કરી અને પોતાની સ્તુતિ કરી. એવામાં પોલાક બોલ્યો કે:— ‘અરે ! બોકડા !

શું બોલે છે ? આ મહાજનને જોતો નથી ? ’ એમ કહી તરત હડીને તેને એક લપડાક ચોપડાવી દીધી. એટલે તે વેષધારી રૌપરક્ત થઈને પાદશાહની સભામાં ગયો અને વૈદ્ય પણ ત્યાં પહોંચ્યો તથા બંનેએ પોતપોતાનો વૃત્તાંત નિવેદન કર્યો. હવે તે બંને માન્ય હોવાથી જેટલામાં રાજ વિચાર કરતો હતો, તેવામાં મદનસિંહ બોલ્યો કે:—‘ હે દેવ ! અહીં વિચાર શો કરવાનો છે ? કારણ કે એકે પોતાની જાલ વાપરી અને બીજાએ પોતાનો હાથ વાપર્યો, માટે એકને દંડ કરતાં બીજાને પણ થશે, તેથી બંનેની સમાનતા હોવાથી કોઈને પણ દંડ ન થાય. ’ આ પ્રમાણે સાંભળીને અંતરમાં હાસ્ય કરતાં રાજાએ તે બંનેને કોમળ વચનથી શાંત કરી પોતપોતાના સ્થાને મોકલ્યા.

एवं यथा मदनासिंहमहेभ्य ऐषः

प्राणात्ययेऽपि शपथं स्वपितुर्न चक्रे ।

तेनार्हदादिविषये शपथो न कार्यः

सत्योऽप्यसत्य इह भव्यजनैर्विधिज्ञैः ॥ ૧ ॥

આ પ્રમાણે જેમ તે મદનસિંહ શ્રેષ્ઠીએ પ્રાણ સંકટમાં પણ પોતાના પિતાના શપથ ન કર્યા (સોગન ન બાધા), તેમ અન્ય ભવ્ય જનોએ અહીં દેવાદિક સંબંધમાં સત્ય કે અસત્ય શપથ ન કરવા.

इति श्री उपदेशसप्ततिकायां पंचमेऽधिकारे

सप्तम उपदेश ॥ ૭ ॥



અષ્ટમ ઉપદેશ.

સુર જનો ‘પ્રાણનો વિયોગ કરવો’ તેને હિંસા કહે છે, અને દ્રવ્ય એ પ્રાણીઓના બાહ્ય પ્રાણ છે. તેથી જેણે પરદ્રવ્યનું હરણ કર્યું, તે તેણે તેના પ્રાણ હણ્યા સમજવા. આ સંબંધમાં સૂતારની સ્ત્રીનો પ્રબંધ સાંભળવા લાયક છે.

સૂત્રધાર-પત્નીની કથા.

તામલિત્ત નગરમાં સૂદા, સૂરા, સૂંટા અને સોના-એવા નામના અને મહિમાવંત એવા ચાર ચતુર શ્રેષ્ઠીઓ હતા. તે બહોળા કુટુંબવાળા, ધનવંત, પરસ્પર પ્રીતિવાળા, સમાન વયના અને રાજસભાના એક શૃંગારરૂપ હતા. તે બધા સરલ સ્વભાવી અને ધર્મ-કર્મમાં પ્રેમાળ હતા. એકદા એકાંતમાં સાથે મળીને તેમણે પરસ્પર વિચાર કર્યો કે:—‘આપણે ધન મેળવ્યું, લોગ લોગવ્યા, પુત્ર વિગેરે થયા અને રાજા વિગેરેથી પણ સન્માન પામ્યા, પરંતુ આપણે આત્મસાધન કંઈ કર્યું નથી. કહ્યું છે કે— ‘જ્યાંસુધી આ શરીર સ્વસ્થાવસ્થામાં હોય, ત્યાંસુધી ચતુર જનોએ ધર્મ સાધી લેવો. કારણ કે ઘર સળગે ત્યારે કુવો કોણ બોદે ?’ આ પ્રમાણે વિચાર કરી પોતાના પુત્રોને ઘરની ચિંતા ભજાવીને સંન્યાસી થઈને તેઓ તીર્થયાત્રા કરવા ચાલ્યા. તે વખતે બુદ્ધા બુદ્ધા લક્ષ મૂલ્યના રત્નને પોતપોતાની ઊંઘીમાં નાખી તેને ખસે લટકાવીને તેઓ શનૈઃ શનૈઃ માર્ગ કાપવા લાગ્યા. એવામાં કોઈ નગરમાં પહોંચ્યા, ત્યાં એક સૂત્રધારના ઘરે લોજન કરી અને તેની પત્નીને તે ઊંઘીઓ ભજાવીને તેઓ ચતુર્થથ

(ચોટા) માં ગયા. ત્યાં રાજની આગળ કુશળ નાટકીયા નાટક કરતા હતા, તે તેમણે જોયું. તે વખતે એકાંત સમજીને સૂત્રધારની સ્ત્રીએ સૂરની ઝોળીમાંથી તેના જીવિત જેવું કિંમતી રત્ન કહાડી લીધું, પછી ત્યાં નાટકમાં દિવસ ગાળીને તેઓ પણ સાંજે ઘરે આવ્યા અને રાતભર ત્યાં રહ્યા. અને પ્રભાતે ઉઠી પોતપોતાની ઝોળી સંભાળ્યા સિવાય તેને ખસે લટકાવીને આગળ ચાડ્યા તથા અનુક્રમે તેઓ ગંગા નદી આગળ આવી પહોંચ્યા. ત્યાં સ્નાનાદિ પુણ્યકર્મ કરીને શ્રાદ્ધ કરવાની ઇચ્છાથી પોતપોતાનું રત્ન વાપરવાને તે ઝોળીમાંથી કહાડવા લાગ્યા. એવામાં પોતાના રત્નને ન જોવાથી સૂર તેમને કહેવા લાગ્યો કે:—‘ હે બંધુઓ ! કેમ પાપીએ મારા તે રત્નનું હરણ કર્યું લાગે છે. આ ઝોળીઓને પ્રાયઃ સર્વદા આપણે આપણી પાસેજ રાખતા આવ્યા છીએ, માટે અહીં કેનાપર બેઠમ લાવવો ? ’ પછી પરસ્પર વિચાર કરતાં તેમાંથી એક બોલ્યો કે:—‘ સાંભળો, જ્યારે આપણે આ ઝોળીઓ સૂત્રધારના ઘરે મૂકીને ત્યાં નાટકમાં વ્યગ્ર થઈ ગયા, તે વખતે તે સૂત્રધારના ઘરે તેની સ્ત્રીજ એકલી હતી, તેથી તેણેજ આ કામ કર્યું લાગે છે. ’ પછી તે ત્રણે બોલ્યા કે—‘ એ વાત સાચી છે. ’ એવામાં સૂર બોલ્યો કે—‘ અહો ! પાતક કરવાની તેની ચતુરાઈ કેવી ? હા નિષ્કારણ વૈરિણી એવી તેણે મને કેટલો બધો ઉદ્વેગ ઉપજાવ્યો. ’ આ પ્રમાણે તેણે છાતીને તપ્પ કરનાર બહુ વિલાપ કર્યો. પુનઃ તે સજેદ બોલ્યો કે:—‘ હવે મારે શ્રાદ્ધવિધાન કેમ કરવું ? અને ત્યાગ (દાન), યાગાદિક કેમ કરવા ? બીજાં પુણ્યકર્મો. પણ ધન વિના શી રીતે કરી શકાય ? ’ પુનઃ તે મનમાં વિચારવા લાગ્યો કે:—‘ જો તેણે મને આવું દુઃખ ઉપજાવ્યું,

તો હું પણ એને પ્રચંડ દુઃખ આપીશ. ’ આ પ્રમાણે વિચારીને સૂર તેમને કહેવા લાગ્યો કે:—‘ હે બંધુઓ ! સાંભળો—હું અહીં કરવત મૂકાવીને મરીશ. અને નિદાન (નિયાણું) કરી સુરપધારી તેનો પુત્ર થઈશ. તે ભવમાં પણ ખાર વરસનો થઈને મરીશ. એમ કરતાં તેને મોટું દુઃખ થશે. અન્યથા ઉપાય નથી. શાસ્ત્રમાં પણ એવું કહ્યું છે કે—જે જેવું કરે, તેની સામે તેવો પ્રતીકાર કરવો. ’ પરંતુ તે સમયે હે બાંધવો ! તમારે પણ ત્યાં આવીને એ વ્યતિકર તેને સવિસ્તર સંભળાવવો, તેની પાસેથી તે રત્ન લઈને અહીં આવી તમારે તેનો વ્યય કરવો. આ સંબંધમાં તમે મને જમણું હાથનો કોલ આપો. ’ પછી તેના કહેવા પ્રમાણે કરવાનો સ્વીકાર કરીને તે ત્રણે પોતાને ઘેર ગયા અને તે વખતે સૂરે પણ ત્યાં તેવી રીતે મરણ સાધ્યું, એટલે તેનો જીવ તે સ્ત્રીના કુક્ષિમાં પુત્રપણે અવતર્યો. કરેલ કષ્ટના અનુમાનથી નિદાન વૃથા થતું નથી. વખત થતાં તે જન્મ પામ્યો. તેનું માણિક્ય એવું નામ રાખવામાં આવ્યું. લાલન પાલન કરી તેને ઉછેરી મોટો કર્યો અને ભણાવ્યો. પછી તેને પ્રૌઠ કુળમાં જન્મ પામેલી એવી રૂપવતી કન્યા પરણાવી અને અનુક્રમે કુટુંબનો ભાર ઉપાડી શકે એવો તે ખાર વરસની અવસ્થાનો થયો.

હવે પૂર્વના સંકેત પ્રમાણે તે ત્રણે વ્યવહારીયા પ્રથમની જેમ યાત્રા કરવા નીકળીને તે નગરમાં આવ્યા. અને તે સૂત્રધારના ઘરે તે કુમારને જોઈને ‘ તેજ આ ’ એમ પરસ્પર કહીને હસવા લાગ્યા. એવામાં તે બાળકને દારૂ જવર ચડ્યો, એટલે ઘણા વૈદ્યો બોલાવ્યા અને ઘણા ઉપાયો કર્યા. તથાપિ તે બાળક મરણ પામ્યો. કારણ કે કરેલ નિદાન શું અન્યથા થાય ? એટલે બધાને ઉદ્વેગ થયો અને તેની માતાને વિશેષ રીતે ખેદ થયો. તે અવસરે

તેમણે તેને કહ્યું કે:—‘ હે ભદ્રે ! પોતે કરેલ કર્મનું ફળ તને આ લવમાંજ પ્રાપ્ત થયું ’ એટલે તે બોલી કે:—‘ મેં શું કર્યું ? ’ તેઓ બોલ્યા કે:—‘ અમુક વર્ષે તારા ઘરે કેટલાક યાત્રાળુઓ આવ્યા હતા, તેમાં એકનું રત્ન તેં ચોર્યું હતું કે નહિ ? પછી તેમનાથી લય પામીને તેણે યથાર્થ વાત કહી. એટલે તેઓ બોલ્યા કે:—‘ તેને દુઃખ આપવાથી તેના જીવે તને દુઃખ આપ્યું છે. ’ આથી પશ્ચાત્તાપ પરાયણ એવી તેણે તેમને તે રત્ન આપી દીધું. એટલે તેમણે પણ તેના કલ્યાણની ઇચ્છાથી તીર્થમાં જઈને તે રત્નનો વ્યય કર્યો.

પછી અનુક્રમે તેમણે પણ પોતાના ગેહ અને દેહનો તપોવિધાનથી ત્યાગ કરી આ સંસારને અદ્ય કર્યો (અદ્ય સંસારી થયા.) માટે હે ભવ્ય જનો ! બીજાને પ્રિય એવા પરધનનું તમે હરણ ન કરો, પણ સંતોષ રૂપ સૌધ (મહેલ) માં રહી આત્માને આનંદ રસનો રસિક બનાવો.

આ વાર્તા પુરાણ સંગ્રાહી છે અને તે મિથ્યાદૃષ્ટિ જનોને ઉચિત છે. કારણ કે તત્ત્વજ્ઞ જોનો તો પરથી થયેલ અપરાધમાં પણ અવિકારી (મધ્મસ્થ) રહે છે. (પોતે વૈર લેવા પ્રયત્ન કરતા નથી.)

॥ इति श्रीउपदेशसप्ततिकायां पंचमेऽधिकारे

अष्टम उपदेशः ॥८॥



નવમ ઉપદેશ.

વિષયરૂપ આમિષમાં લંપટ થયેલ માણસ આ ભવમાંજ વિહંગના પામે છે. યજમાનથી અવગણના પામેલો તાપસ જેમ લઘુતા પામ્યો હતો.

તાપસની કથા.

પૂર્વે ચંપકપુરમાં શ્રેષ્ઠ ગુણસંયુક્ત અને ચક્રોરના જેવો ચતુર એવો ચક્રોર નામે શ્રેષ્ઠી હતો. તે ધર્મકૃત્યમાં તત્પર છતાં તાપસોનો સદા અભ્યાસ કરતો હતો. ખરેખર ! ધર્મપરીક્ષા દુર્લભ છે. એકદા તેણે કોઈ તાપસને પોતાને ઘેર ભોજનને માટે નોતરીને તેને જમાડ્યો. માત્ર પોતાનુંજ ઉદર ભરનાર એવા તે દુરાત્માએ જમતાં જતાં ગૌરવર્ણવાળી અને લાંબા કર્ણવાળી એવી શ્રેષ્ઠીની જે સુતા ભેઠ, પગથી મસ્તક પર્યંત તેમનું રમ્ય રૂપ જોતાં તેને કામવાસના જાગ્રત થઈ, કારણ કે તેવાઓને વિવેક હોતો નથી. ભોજન કર્યા પછી પોતાના શિષ્યોથી છાની રીતે અને લજ્જાને દૂર કરીને તે તાપસે યજમાનની આગળ કહ્યું કે:—‘આ કન્યાઓ કોની છે ?’ તે બોલ્યો કે—‘હું ભગવન્ ! તે મારી છે.’ એટલે તેણે કહ્યું કે:—‘એ મને આપ. કારણકે તું ગુરુલક્ષ્મી છે. વળી જે વસ્તુ પોતાને વલ્લભ હોય, તેનો મનમાં વિચાર કર્યા વિના અક્ષય સુખને ઇચ્છનારા યજમાને એકાંતે ગુરુનેજ આપવી.’ આ સાંભળીને શ્રેષ્ઠી બોલ્યો કે:—‘હું ભગવન્ ! તમારે આવો વિચાર કરવો પણ ઉચિત નથી, તો મુખથી એવું કેમ બોલાય ?’ એટલે તે રૂઢમાન થઈને બોલ્યો કે:—‘અરે ! મારી પણ તું

અવગણના કરે છે. જો માડું વચન નહિ માને, તો તને ખૂડું પરિ-
ણામ ભોગવવું પડશે. ' પછી અંતરમાં ક્રોધ છતાં બહારથી કંઈક
સામપૂર્વક પુનઃ શ્રેષ્ઠી આ પ્રમાણે બોલ્યો:—' હે ભગવન્ !
આપના જેવાઓને તો વિશેષે કરીને મારે અદેય (ન દેવાય એવું)
કંઈ છેજ નહિ, પરંતુ પ્રકટ રીતે જો એ કન્યાઓ તમને આપું
તો તમારે અને મારે પણ ભવિષ્યમાં લક્ષ્મીરૂપદ છે. માટે તમે
હમણાં જાઓ. પછીથી હે પ્રભો ! અહીં જે નદી છે, તેમાં પેટીના
ઉપાયથી આ બે કન્યાઓ તમને ભેટ કરીશ, આ સંબંધમાં તમે
સંશય કરશો નહિ. ' આ પ્રમાણે સાંભળીને ખુંઠી મતીવાળો તે
તાપસ પોતાના મઠમાં ગયો અને તે દુરાત્માએ તેજ વિચારમાં ને
વિચારમાં તે રાત્રિ ગાળી. પછી તે યજ્ઞમાને વનમાંથી બે વાંદરી
મંગાવીને પેટીમાં નાખીને તે નદીમાં વહેતી મૂકી દીધી. એવામાં
તાપસ પોતાના શિષ્યોને આ પ્રમાણે કહેવા લાગ્યો કે:—' આજ
રાત્રે કોઈ દેવ મારાપર તુષ્ટમાન થઈને આ પ્રમાણે બોલ્યો કે:—
' પ્રભાતે નદીમાં વહેતી જે પેટી આવે તે તારે મઠમાં લઈ જવી
અને તેમાં રહેલ સાર તારે હિતકર હોવાથી તે લઈ લેવું. ' આ
પ્રમાણે સાંભળીને શિષ્યો ખુશ થઈ ગુરૂની પ્રશંસા કરવા લાગ્યા:—
' અહો ! તમે ધન્ય છો, કે જેને દેવો પણ આ પ્રમાણે વશવર્તી
છે. ' પછી પ્રભાતે તે મંજૂષા મઠ પાસે આવી, એટલે તેને શિષ્યો
પાસે લેવાવીને તેણે મઠમાં રખાવી અને તાપસે તે શિષ્યોને
એકાંતમાં શિક્ષા આપી કે:—' અરે ! આમાં કંઈક રહસ્ય હશે,
માટે તમે માડું વચન સાંભળો:—' એને મઠમાં કપાટ બંધ કરી
અને સ્થિર ધ્યાન ધરીને વિધિપૂર્વક ઉઘાડવી પડશે. માટે મારા
કહેા વિના હે શિષ્યો ! તમારે કપાટ ઉઘાડવા નહિ. કારણકે

અવિધિ યોગીઓને પણ અનર્થકારી થઇ પડે છે. ' આ પ્રમાણેનું તેનું વચન શિષ્યોએ કબૂલ રાખ્યું. એટલે તાપસ મઠમાં ગયો અને મોટા મનોરથથી તેણે તે પેટી ઉઘાડી. એવામાં અત્યંત ક્ષુધિત અને ચંચલ થયેલ અને ફૂર નખવાળી એવી તે બન્ને મર્કટી તરત છલંગ મારી બહાર નીકળીને તેની સન્મુખ આવી અને તેની સરલ તથા ઉન્નત નાસિકાને પ્રથમ તેઓએ કરડી ખાધી, પછી બંને વિપુલ ગાલ છેદી નાખ્યા અને ભાલને ભેદી નાખ્યું. વળી પરના અન્નથી પીવર થયેલ તેના ઉદરને પણ તરત ચીરી નાખ્યું. એટલે તે પોકારવા લાગ્યો કે:—‘હૈ શિષ્યો! હું ભક્ષિત થઇ ગયો, હું ભક્ષિત થઇ ગયો. ’ તે વખતે કષ્ટને સહન કરનાર તે બિચારો એક હતો, અને તે બંને વાંદરી અત્યંત ક્ષુધિત હતી, તથા શિષ્યોએ કપાટ ન ઉઘાડ્યા. તો હુ:બનો પાર કેમ આવે ? એવામાં બહાર રહેલા તે શિષ્યો તો વિચારવા લાગ્યા કે:—‘બરેબર ! આ કોઇ પણ દેવ ગુરૂને નિશ્ચય ઉપસર્ગ કરે છે. ’ છેવટે બહુ વખત પછી દ્વાર ઉઘાડતાં ઝરતા રક્તના પ્રવાહથી સાક્ષાત્ રક્તગિરિ જેવો તે તાપસ પેલી બંને મર્કટી સાથે બહાર નીકળ્યો, એટલે શિષ્યોએ પૂછ્યું કે:—‘હૈ ભગવન્ ! પૂજ્ય એવા તમને પણ આ શું થયું ? આથી તેણે પોતાનો યથાર્થ વૃત્તાંત કહી સંભળાવ્યો, પછી ઉપહાસ, કાફલુચ અને દૈન્ય સહિત શિષ્યો બોલ્યા કે:—‘યજ્ઞમાને ગુરૂને અનુદ્રપ ભક્તિ કરી, પોતાના આચારને મૂકતા એવા પ્રત્યે એને આવું કરવું ઉચિતજ છે. કારણ કે રૂદ્રની ભસ્મથીજ પૂજા થાય, પણ ચંદનથી તે ન થાય. પછી બહુ વખત જતાં તે સ્વસ્થ થયો, એટલે યજ્ઞમાને તેને બોધ આપ્યો કે:—‘હૈ ભગવન્ ! આવું કર્મ તાપસ જનોને ઉચિત ન હોય ! આ પ્રમાણે તેને શિખામણ આપીને

ચન્નમાન પોતાના ઘરે ચયો અને તાપસે પણ ચિરકાલ પર્યંત તાપત્રી દીક્ષાનું પરિપાલન કર્યું.

યદિ શિવનગરચિયાસા,
ભવે જિહાસા ચ વો ભવેદ્ ભવ્યાઃ ।
તદમી વિષમા વિષયાઃ ,
કિંપાકફલોપમાસ્ત્યાજ્યાઃ ॥ ૧ ॥

હે ભવ્ય જનો ! જો તમારે સંસારનો ત્યાગ કરવાની અને શિવનગરમાં જવાની ઇચ્છા હોય, તો કિંપાકના ફલ સદૃશ આ વિષમ વિષયોનો ત્યાગ કરો.

॥ इति श्री उपदेशसप्तकियां पंचमेऽधिकारे
नवम उपदेशः ॥ ९ ॥



દશમ ઉપદેશ

પરિવ્રહ્મરૂપ ભારે શિલાનું અવલંબન કરનારા માણસો સંસારરૂપ મહાસાગરમાં પતન પામે છે, પણ વિદ્યાપતિની જેમ બુદ્ધિમાનો સંતોષરૂપ વજ્રથી તેને ભેદીને સંસાર સાગરને તરી બીધ છે.

વિદ્યાપતિ શ્રેષ્ઠિની કથા.

પોતાનપુરમાં પરાક્રમેથી શૂરવીર એવો શૂર નામે રાજા હતો. ત્યાં વિદ્યાપતિ શ્રેષ્ઠ અને તેની શૃંગાર સુંદરી નામે ભાર્યા હતી. એકદા લક્ષ્મીએ સ્વપ્નમાં તેને કહ્યું કે:—‘હે વત્સ ! હું હ

દશમે દિવસે ચાલી જઈશ, માટે ચિરકાળથી તું છુટો થઈશ.' પછી તે શ્રેષ્ઠિએ જાગૃત થઈને તે વૃત્તાંત પોતાની સ્ત્રીને નિવેદન કર્યો અને 'હવે લક્ષ્મીનો નાશ થતાં શું થશે ?' એવી તે ચિંતા કરવા લાગ્યો. એવામાં વિશુદ્ધ બુદ્ધિવાળી એવી તે શેઠને કહેવા લાગી કે:—'હે સ્વામિન્ ! જો એમ હોય તો તે બધી સુપાત્ર દાનમાં વાપરી નાંખો, કારણ કે નહિ તો પણ તે જવાનીજ છે.' પછી તે શ્રેષ્ઠિ બધું ધન વાપરવા લાગ્યો. તથાપિ કુવાના જળની જેમ તે પ્રતિદિન વધવા લાગ્યું જેમ જેમ તે વ્યય કરતો ગયો તેમ તેમ તેના ઘરમાં વૃદ્ધિ થતી ગઈ. શું ભારતીનો ભંડાર વાપરતાં કદી ક્ષીણ થાય ? પછી જીનમંદિરમાં જિનેશ્વરની આગળ તે દંપતિએ પરિગ્રહપરિમાણવ્રતમાં પરસ્પર આ પ્રમાણે પ્રમાણ કરી લીધું કે:—'ત્રિકાલ જિન પૂજા, બે વાર પ્રતિક્રમણ, દાનપૂર્વક ભોજન, બે બેજોડી વસ્ત્રો, એક શૃંગાર સુંદરીજ પત્નિ, મહિનામાં વીશ દિવસો આપણે ઉત્તમ શીલ પાળવું, એક કચ્છોલાું ભોજન પરંતુ તે બંને કચ્છોલા સુવર્ણના હોય, દિવસમાં એક વાર ભોજન પર્વ દિવસે ચાર પ્રકારના આહારનો ત્યાગ અને ધૌષધ, રાત્રીએ આહારનો સર્વથા ત્યાગ, જુના નાણાના એકસો ટકા, ઘરમાં એક માસ ચાલે તેટલુંજ ધાન્ય, દ્વિપદાદિકમાં નિયમ, એક સચિત્તને મૂકીને અન્ય સચિત્તનો આપણે નિયમ, પરંતુ આપણને પૂજના ઉપકરણમાં સર્વ સચિત્તની છૂટ—આ પ્રમાણે સમ્યક્ત્વમૂલ બાર વ્રતનો સ્વીકાર કરીને ઘરે જઈ તે દંપતિ પોતાની સમસ્ત લક્ષ્મીનો વ્યય કરવા લાગ્યા. પછી દશમે દિવસે બધું ધન વાપરીને શ્રેષ્ઠિ નિશ્ચિંત થઈને સુતો. એવામાં રાત્રે લક્ષ્મીએ આવીને તેને કહ્યું કે:—'હે વત્સ ! હું તારે ઘેર રહી છું. તારાં પુણ્યરૂપ દામ- (દોરી) થી બંધાએલી હું હવે ક્યાંય પણ જવાને સમર્થ નથી.

તને વિદ્ય પ્રાપ્ત થયા છતાં પુણ્યના પ્રભાવથી તેનો વિલય થઈ ગયો. પુણ્ય એ ખરેખર ! શૃંગલા (સાંકળ) સમાન છે અને લક્ષ્મી એ મર્કટી સમાન છે. તે સાંકળથી બંધાયેલ ચંચલ છતાં ક્યાં જઈ શકે તેમ છે ?

એકદા તે લક્ષ્મીને પણ સુપાત્રે વાપરી, ઘરનો ત્યાગ કરી અને જ્ઞાતિવર્ગથી મુક્ત થઈ મસ્તક પર જિનપૂજનો ખુમચો લઈને ધાર્મિક અને સાક્ષાત્ પુણ્યના સમૂહ સમાન તે શ્રેષ્ઠ નગરની બહાર નિકળ્યો અને જેટલામાં નગરના મુખ્ય દ્વાર આગળ આવ્યો તેટલામાં તે નગરના અપુત્રીયા રાજાનું અકસ્માત્ મરણ થયું એટલે અધિકારી જનોએ પાંચ દિવ્ય તૈયાર કર્યા અને તે પાંચ દિવ્યોએ પણ તેજ શ્રેષ્ઠિને સામ્રાજ્ય આપ્યું એટલે તે બોલ્યો કે:—‘હું રાજ્યને લાયક નથી અને મારે અભિષેકથી સર્થ.’ એવામાં દિવ્ય વાણી થઈ કે:—‘અહો ! તારું ભાગ્ય મોટું છે. માટે તેનો પ્રતિષેધ (ન કાર) ન કર, કારણ કે ભવિતવ્યતા અન્યથા થવાની નથી એટલે શ્રેષ્ઠિએ કહ્યું કે:—‘જે એમ હોય તેો મારું વચન સાંભળો:—‘પ્રથમ શ્રી જિનબિંબનો અભિષેક અને પછીથી મારો અભિષેક કરો.’ આથી હર્ષપૂરિત એવા તેઓએ પણ એ પ્રમાણે કર્યું. આ પ્રમાણે સામ્રાજ્ય પ્રાપ્ત કરીને નગરની સ્ત્રીઓના મંગલપૂર્વક તે શ્રેષ્ઠિ પરિવાર સહીત રાજમહેલમાં આવ્યો ત્યાં મુખ્ય સિંહાસન પર જિનેન્દ્ર પ્રતિમાને સ્થાપીને અને પોતે તેની પાદપીઠ પર બેસીને રાજકાર્યો સાધવા લાગ્યો. તે વખતે સમ્યગ્દષ્ટિ દેવોએ રત્નવૃષ્ટિ કરી. અને તે શ્રેષ્ઠિ જિનનુંજ એક છત્ર રાજ્ય કરવા લાગ્યો. ધર્મકર્મમાં તત્પર એવા લોકોને તેણે કરમુક્ત કર્યા અને સર્વત્ર જિનાજ્ઞા પ્રવર્તાવી કારણ કે ‘યથા રાજા તથા પ્રજા’ એવું નીતિવાક્ય છે. તેણે પાંચ સો જિન ચૈલો કરાવ્યા અને તેમાં

સુવર્ણ રત્નની પ્રતિમાઓ સ્થાપન કરાવી. પોતાના નિયમને અખં-
ડિત રાખી જિનાસાને અખંડરીતે પાળતાં તેણે જિનનિશ્રાથી
ચિરકાલ પર્યંત અખંડ રાજ્ય ભોગવ્યું.

આ પ્રમાણે પરિવ્રજ સાગરને નિયમિત કરીને તે રાજા
જેમ અક્ષય પદને પામ્યો, તેમ હે :ભવ્ય જનો ! જો તમે પણ
તેવા સુખને ઇચ્છતા હો તો સત્વર પરિવ્રજનો સંક્ષેપ કરો.

॥ઈતિ શ્રી ઉપદેશસપ્તતિકાયાં પંચમેઽધિકારે

દશમ ઉપદેશઃ ॥ ૧૦ ॥



एकादश उपदेश.

અંત્ય (નીચ) જનોને ઉચિત, સ્વપર શાસ્ત્રવચનથી
વિવર્જિત, અદ્ય ગુણકર અને બહુ દોષથી પરિપૂર્ણ એવા રાત્રિ-
ભોજનનો જિનમત રસિક શ્રાવકો ત્યાગ કરે છે. યોગ શાસ્ત્રમાં
કહેલ રાત્રિભોજનના દોષો સાંભળીને કયો તત્ત્વજ્ઞ પુરૂષ રાત્રે
ભોજન કરે ? રાત્રિભોજનના નિયમની આરાધના અને વિરાધનાના
સંબંધમાં ત્રણ મિત્રોનો પ્રબંધ સાંભળવા લાયક છે.

ત્રણ મિત્રોની કથા.

કોઈક ગામમાં પૂર્વે ત્રણ વણિક મિત્રો હતા. તે અનુક્રમે
શ્રાવક, ભદ્રક અને મિથ્યાદષ્ટિ હતા. એકદા તેઓ જૈનાચાર્ય પાસે
ગયા એટલે ગુરૂ મહારાજે તેમની આગળ સુશ્રાવકોને ઉચિત
એવી ધર્મદેશના આપી. તે સાંભળી શ્રાવકકુળમાં ઉત્પન્ન

થયેલ હોવાથી તેમાંના શ્રાવકે કંદમૂળ રાત્રિલોજન વિગેરેના નિયમો તરત હર્ષપૂર્વક લીધા, અને ભદ્રકને તો બહુ કહેવામાં આવતાં પણ અન્ય નિયમ સિવાય માત્ર રાત્રિલોજનનો જ તેણે એક નિયમ લીધો તથા મિથ્યાદૃષ્ટિએ કંઈ નિયમ ન આદર્યો. આથી શ્રાવક અને ભદ્રકનું કુટુંબ પણ ધાર્મિક થયું. કારણ કે ગૃહવ્યવસ્થા બધી ગૃહસ્વામીને અનુસરતી હોય છે. પછી અનુક્રમે પ્રમાદની બહુલતાથી અને તેવા પ્રકારના કાર્યમાં વ્યગ્ર હોવાથી શ્રાવક પોતાના નિયમમાં શિથિલ આદરવાળો થઈ ગયો. તેથી તે ત્યાજ્ય બે ઘડીની અંદર તથા કોઈવાર સૂર્ય અસ્ત થતાં પણ લોજન કરી લેતો હતો. સવાર સાંજને જાણતાં છતાં તે અજાણ્યા જેવો થઈ ગયો, આમ કરતાં તેનું કુટુંબ પણ શિથિલ થઈ ગયું. અને ભદ્રક પોતાના નિયમને સમ્યક્ પ્રકારે આરાધવા લાગ્યો.

એકદા રાજકાર્યમાં વ્યગ્ર થવાથી ભદ્રક અને શ્રાવક બહુ અસુરાં વેર આવ્યા, તે વખતે સૂર્યાસ્ત થઈ જવાથી ભદ્રકે લોજન ન કર્યું અને કુટુંબની પ્રેરણાના વશથી શ્રાવકે તો જમી લીધું. તે વખતે લોજન કરતાં શ્રાવકના ભાણામાં પોતાના મસ્તક પરથી એક જૂ પડી અને તે અજાણતાં લોજન સાથે ખાઈ ગયો. આથી જલોદરના રોગથી તે અત્યંત બાધિત અને વ્યાકુળ થઈ ગયો. આવી રીતે નિયમની વિરાધના કરી મરણ પામીને તે બિલાડો થયો. તે ભવમાં પણ દુષ્ટ સ્વાનથી કદર્થના પામી મરણ પામીને તે પ્રથમ નરકમાં ગયો અને ત્યાં બહુ દુઃખ પામ્યો. હવે પેલો મિથ્યાત્વી પણ રાત્રિ લોજનમાં આસકત થઈ કોઈવાર વિષમિશ્ર આહાર જમવાથી શનૈઃ શનૈઃ તેના આંતરડા તૂટવા લાગ્યા અને તે નિખિડ પીડાથી ચિરકાલ પછી મરણ પામીને તે બિલાડો થયો.

અને ત્યાંથી પૂર્વ મિત્રની જેમ પ્રથમ નરકમાં નારક થયો. અને ભદ્રક તો પોતાના નિયમને પાળીને સૌધર્મ દેવલોકમાં પ્રોઠ દેવ થયો. અહો ! તેમને કેવુંલિત્ત લિત્ત ફળ મળ્યું. પછી શ્રાવકનો જીવ ત્યાંથી કોઈએક દરિદ્ર ગ્રાહ્યણનો શ્રીપુંજ નામે પુત્ર થયો અને મિથ્યાત્વીનો જીવ તેનો લઘુ બંધુ થયો. તે કુળમાં પણ રાત્રિલોજન વિગેરે કર્મમાં આસક્ત હોવાથી તેઓ જૈન ધર્મના લેશ મર્મને પણ જાણી શક્યા નહિ.

હવે એકદા ભદ્રક દેવે ઉપયોગ દઈને એકાંતમાં તેમને પોતપોતાના પૂર્વભવ અને સ્વરૂપ નિવેદન કર્યાં. આથી પ્રતિષેધ પામીને પૂર્વ પ્રમાણે તેમણે રાત્રિલોજનનો નિયમ લીધો એટલે તે મિત્ર દેવતાએ તેમને વધારે દૃઢ કર્યાં. કહ્યું છે કે:—

“ પાપાન્નિવારયતિ યોજયતે હિતાય,
ગુહ્યં નિગૂહતિ ગુણાન્ પ્રકટીકરોતિ ।
આપદ્ગતં ચ ન જહાતિ દદાતિ કાલે,
સન્મિત્રલક્ષણમિદં પ્રવદંતિ ધીરાઃ ” ॥ ૧ ॥

‘ જે પાપથી અટકાવે છે, હિતમાં જોડે છે, ગુપ્ત વાત છાની રાખે છે, ગુણોને પ્રગટ કરે છે, આપત્તિમાં દૂર જતો નથી અને અવસરે સહાય આપે છે—આ સન્મિત્રનાં લક્ષણો છે—એમ ધીર પુરૂષો કહે છે. ’ પછી પોતાના વ્રતમાં દૃઢ થયેલા એવા તેમને જનક વિગેરેએ બહુ કહ્યું છતાં રાત્રિલોજન ન કરતાં ત્રણ લાંઘણ થઈ. હવે તેમના નિયમના આહુત્યને વધારવા તે દેવતાએ ત્યાંના રાજના જઠરમાં મોટી પીડા ઉત્પન્ન કરી અને જેમ જેમ પ્રતીકારો કરવામાં આવે, તેમ તેમ ધીથી અગ્નિ-જ્વાળાની જેમ તેનો વ્યાધિ અધિક અધિક વધતો જાય.

એટલે સમસ્ત રાજવર્ગ કિંકર્ત્તવ્યતાથી મૂંઢ થઇ ગયો—
એવામાં આ પ્રમાણે દિવ્ય વાણી થઇ કે:—‘હે લોકો !
આંલજો:—‘ પોતાના નિયમમાં એકાગ્ર એવા શ્રીપુંજ બ્રાહ્મણના
માત્ર હસ્તસ્પર્શથીજ એ રાજાનો વ્યાધિ જશે, અન્યથા નહિ
જાય. ’ ‘ એ શ્રીપુંજ કોણ ? ’ એમ બધા સ્તબ્ધ થઇને બોલ્યા,
એટલે તેમાં એક બોલ્યો કે:—‘ એક દરિદ્ર બ્રાહ્મણનો દૃઢ
નિયમવાળો એક પુંજ નામે પુત્ર છે. જે કુટુંબના કલહથી ત્રણ
લાંઘણ થતા પણ પોતાના સદ્વ્રતમાં અક્ષુબ્ધ (નિશ્ચળ) છે.
ખરેખર તેજ પુંજ હોવો જોઈએ. ’ એમ સંભાવના માત્ર થતાં
અતિશય બહુમાનથી સચિવાદિકોએ શ્રીપુંજને બોલાવ્યો,
એટલે તે પણ તરત ત્યાં આવ્યો, અને બોલ્યો કે:—‘ જો રાત્રિ-
લોજનનો મારો નિયમ દૃઢ હોય, તો અત્યારેજ રાજાની ઉદર
વ્યથા શાંત થાશે. ’ એમ બોલવાપૂર્વક પોતાના માત્ર હસ્ત-
સ્પર્શથી એક દ્વાણુવારમાં સર્વ નગરજનોની સમક્ષ તેણે રાજાને
સ્વસ્થ કર્યો આથી સંતુષ્ટ થઇને રાજાએ તેને પાંચસો ગામ
આપ્યા અને તેણે પણ રાજા વિગેરેને જૈન ધર્મી બનાવ્યા.

આ પ્રમાણે શ્રીપુંજ વિપ્ર તથા તે મિથ્યાત્વીનો જીવ
તેનો લઘુ બંધુ રાજા વિગેરેને માન્ય થઈ પડ્યા, અને અનેક
પ્રકારે ધર્મ સાધનાર તથા જિનમતમાં તત્પર એવા તે બંને અને
તે દેવ (તે ત્રણે) પણ અવસરે ચવીને અનુપમ સુકૃતથી સિદ્ધિ
સુખને પામ્યા. માટે હે ભવ્ય જનો ! જો તમારે ભવને ભસ્મ
કરવાની ઇચ્છા હોય તો રાત્રિલોજનનો ત્યાગ કરો.

॥ इति श्री उपदेशसप्ततिकायां पंचमोऽधिकारे

एकादश उपदेशः ॥ ११ ॥



દ્વાદશ ઉપદેશ.

હે ભવ્ય જનો ! જો સમતા રહિત સામાયિક કરવામાં આવે તો તે નિરર્થક છે. માટે કેસરીની જેમ તમે સામાયિકની આરાધના કરો કે જેથી સમસ્ત સુખ પ્રાપ્ત થાય. સમભાવથી બે ઘડી વાર સામાયિક કરતાં શ્રાવક પણ (દરપદરપદરપ) એટલા પદ્યોપમ પ્રમાણુ દેવતાનું આયુ ખાંધે. વળી સમતા રહિત જે સામાયિક આવરે, તે મુંઠબુદ્ધિ પરમાત્મમાં ક્ષારક્ષેપ જેવું કરે છે.

કેસરીની કથા.

શ્રી નિવાસપુરમાં રિપુમર્દન નામે રાજા હતો. ત્યાં ધર્મ કર્મમાં તત્પર એવો સમરસિંહ નામે એક શ્રેષ્ઠી રહેતો હતો. તેનો કેસરી નામે પુત્ર હતો. તે સ્વભાવે ઇર્ષ્યાલુ, ઉદ્વ્રત, વ્યસની, દુર્વિનીત અને કુલાંગાર જેવો હતો. તેથી તેના પિતાએ સર્વ જનોની સમક્ષ તેને ઘરથી બહાર કહાડી મૂક્યો. એટલે તે નિરંકુશ થઈને બધાના ઘરમાં ચોરી કરવા લાગ્યો. એ પ્રમાણે તે ચોરી કરતો હતો, એવામાં એકદા રાજાએ સલામાં સલામ કર્યો કે:—‘ એ કોણ ? અને કોનો પુત્ર છે ? ’ તે વખતે તેનો પિતા ત્યાં બેઠો હતો, તે અંજલિ જોડીને બોલ્યો કે:—‘ હે સ્વામિન ! એ મારો કુપુત્ર છે અને ઘરથકી એને મેં કહાડી મૂક્યો છે. વળી ‘ ચોરી કર્યા વિના મારે જમવું નહિ. ’ એવો એનો અભિપ્રાય છે અને હે નાથ ! વળી એનો આ વિશેષ સંબંધ સાંભળો:— ‘ એકદા સરોવરના કાંઠે બેસીને બેટલામાં એ દુષ્ટ બુદ્ધિ વિચાર કરતો હતો, તેવામાં આદ્યાશમાર્ગે પગમાં બે પાદુકાને ધારણ

કરતો કોઈક યોગી ત્યાં આવ્યો અને તે પાદુકા ત્યાં મૂકીને જેવામાં તે સ્નાનાદિક કરે છે, તેવામાં તે પાદુકા લઈને એ આકાશમાં ઉડી ગયો. તે પાદુકાના પ્રભાવથી એ પોતે એક છતાં અનેક તસ્કરનું કામ કરે છે અને હે વિલો ! દુષ્ટ રોગની જેમ નગરને એ અસાધ્ય થઈ પડ્યો છે. વળી તે નગરની અધિષ્ઠાયક દેવી આગળ આ પ્રમાણે સ્તુતિ કરે છે કે—‘ હે દેવી ! ચોરીમાંથી અર્ધ લાગ તને ભોગ આપીશ અને અર્ધ લાગ હું વાપરીશ, પણ જે તારા પ્રસાદથી તે ચોરી મને સફલ થશે, તો આ મારો નિયમ હું પાળીશ એટલે તે દેવીએ તેને અનુજા આપી, ત્યારથી એ સિદ્ધ ચોર થયો. ’ પછી તેના મર્મને સમજી સારા સુભટો લઈને રાજા દેવીના લવનમાં આવીને ત્યાં ક્યાંક છુપાઈ રહ્યો. એવામાં તે તસ્કર કોઈનો વિશ્વાસ ન કરતાં પાદુકાને હાથમાં લઈને માતાની જેમ તે દેવીને પૂજવા આવ્યો. એટલે રાજા જેટલામાં પ્રગટ થઈ તેનો આક્રોશ કરે છે, તેવામાં પાદુકા પહેરીને પક્ષીની જેમ તે ઉડી ગયો. ‘ અરે ! આ ચોર જાય છે, જાય છે. ’—એમ રાજાથી પ્રેરિત થયેલા સર્વ સુભટો કોલાહલ કરીને તેની પાછળ દોડવા લાગ્યા. એવામાં તે ચોર વિચારવા લાગ્યો કે—‘ આજે અરેબર મારા અભિગ્રહનો ભંગ થશે. કારણ કે આજનો મારો દિવસ ચોરી વિના જાય છે. ’ ઇત્યાદિ ચિંતવતાં તે ચોર આગળ ચાલ્યો જતો હતો, તેવામાં નીચે પૃથ્વીપર પર્ષદામાં આ પ્રમાણે બોલતા કોઈ જાનીને તેણે જોયા—‘ હે ભવ્ય જનો ! રતન આણીની જેમ મનુષ્ય જન્મ પામીને કોટી દ્રવ્યથી પણ દુર્લભ એવા એક રતનને સ્થિર કરવું ’ આ સાંભળીને સ્તબ્ધ થઈને તેણે વિચાર્યું કે—‘ એવું રતન મેં અદ્યાપિ ચોર્યું નથી, તો કર્યું શું ? ’

એમ વિચારે છે, એવામાં પુનઃ મુનિ બોલ્યા કે:—‘ દેવતાઓને પણ દુર્લભ એવા એક સામાયિક રત્નનું રાગ, દ્વેષાદિક ચોરોથી પ્રયત્ન પૂર્વક રક્ષણ કરવું. અંતર્મુદૂર્ત પર્થત ચિત્તની સમતા, તે સામાયિક કહેવાય છે, કે જેમાં કષાયો તદ્દન દૂર કરવાના હોય છે. અને જેમાં દાનાદિક પુણ્યની જેમ બાહ્ય આડંબર કરવાની જરૂર નથી. માટે શ્રાવકોએ અહોરાત્રમાં યથાવસરે તે કરવું જોઈએ ’ આ પ્રમાણે સાંલળીને તે સામાયિકમાં સ્પૃહા કરતા એવા તે કેસરી ચોરે પોતાના મનની સાક્ષીએ સામાયિકવ્રત લઈ લીધું અને દ્વેષરહિત શુદ્ધ ભાવથી અને રાજાદિકથી પણ નિર્ભય થઈને મુનિના કહ્યા પ્રમાણે તે અનુષ્ઠાન કરવા લાગ્યો. કારણ કે —વ્યાપારોમાં જિનેશ્વરોએ મનોવ્યાપાર સર્વોત્કૃષ્ટ કહેવ છે. જે સાતમા નરકે અથવા તો મોક્ષે પણ લઈ જાય ’

હવે લઘુકર્મ પણાથી તે વખતે તે ચોરને કેવળજ્ઞાન ઉત્પન્ન થયું અને ઇંદ્રોએ તેનો મહિમા કર્યો. પછી દેવતાએ આપેલ વેષ ધારણ કરીને હજાર પત્ર વાળા સુવર્ણ કમળ પર બેસીને તે કેવલી લગવંત ત્યાં દેશના દેવા લાગ્યા. એવામાં રાજા ત્યાં આવ્યો અને તેમનું તેવું વર્તન જોઈને તે અત્યંત વિસ્મય પામ્યો. અહો ! કર્મની કેવી વિચિત્રતા છે ? પછી કેવલી બોલ્યા કે:—‘ હે રાજેન્દ્ર ! સામાયિકવ્રત જો, કે જેનાથી મને એક ક્ષણવારમાં પણ લોકોત્તર ક્ષણ પ્રાપ્ત થયું. ’ આ પ્રમાણે રાજા વિગેરેને પ્રતિબોધી અને ચોરીનો માલ બધો બતાવીને લોકોપર ઉપકાર કરવા તેમણે વસ્તુ-શ્ચાતલપર વિહાર કર્યો.

એ રીતે ચિરકાલ લોકોને પ્રતિબોધીને અખિલ કર્મ-જાળનો ક્ષય કરી તે કેસરીમુનિ પરમપદ પામ્યા. માટે હે સર્જન-

નો ! આવા સામાયિકવ્રતના ફળનો વિચાર કરી તેમાં પરમ આદર કરો.

॥ इति श्री उपदेश सप्ततिकायां पंचमेऽधिकारे
द्वादश उपदेशः ॥ १२ ॥

त्रयोदश उपदेश.

સત્ય જનોએ આ પ્રતિક્રમણનો આદર કરવો. કે જેને જિનવરોએ જગતના હિતાર્થે પાંચ પ્રકારે કહેલ છે. અને પાપથી નિવૃત્તિ તથા સુકૃતમાં વારંવાર પ્રવૃત્તિ—આ પ્રમાણે બુધ જનોએ જેનો અભિધાર્થ કહ્યો છે. કહ્યું છે કે:—‘ મિથ્યાત્વથી પાછા હઠવું, તથા અસંયમથી કષાયોથી અને અપ્રશસ્ત યોગોથી પાછા હઠવું એમ આનુપૂર્વીથી ચાર પ્રકારે સંસારનું પ્રતિક્રમણ થાય છે અને અનાગત કાલમાં તેનો પ્રતિરોધ કરવામાં આવે છે. ’ વળી ‘ સ્વસ્થાન (ગુણ) થી પ્રમાદના વશે પરસ્થાને (અતિચારમાં) જવાયું, તો પુનઃ ત્યાંજ આવવું—તે પ્રતિક્રમણ કહેવાય છે. એક પ્રતિક્રમણમાં પણ જો પાપાદિકથી ઉપયોગ પૂર્વક નિવર્તવાના આ પ્રકાર હોય, તો તે ભાવ પ્રતિક્રમણ કહેવાય છે. જે સત્ય જનો દિવસે દિવસે આવું પ્રતિક્રમણ કરે છે, તેમને સજ્જનની જેમ આ લોક અને પરલોકમાં પણ સુખ પ્રાપ્ત થાય છે.

સજ્જનની કથા.

श्री पाटणु नगरमां (१२३५) मा वर्षे लाज्यवन्त
सीमदेव नामे अश्विद (घेदो—लोणो) राजा હતો. તેણે

સહસ્રકલા નામની એક વેશ્યાને પોતાની અંતેઊરી (રાણી) બનાવી હતી અને તેથી સમ્યક્ત્વપૂર્વક બાર વ્રતથી વિભૂષિત અને રાજ્યમાં અધિકારી એવો શ્રીમાલજ્ઞાતિનો સજ્જન નામે દંડનાયકજી રાજાની જેમ રાજ્યની અને દેશવિગેરેની કાલજી રાખતો હતો ‘ જિનેશ્વરને પૂજીને જમવું’ અને પ્રતિક્રમણ કરીને સુવું.’ આ બે તેને દૈન્ય નિયમ હતા.

એકદા પાટણપર યવનોની સેના ચડી આવી તેથી આ બાલવૃદ્ધ સર્વ લોકો ભયાકુલ થઈ ગયા એટલે સૈન્યને લઈને સજ્જનની સાથે દેવી સન્મુખ ગઈ અને રણક્ષેત્રની ભૂમિકા તરત તૈયાર કરી. તે વખતે ચોવીશ હજાર અશ્વો, બત્રીશ હજાર માણસો અને અઢારસો હાથીઓ તૈયાર થઈ ગયા તથા સુભટોને ગજ, અશ્વ, શસ્ત્ર અને બખતર ભિન્ન ભિન્ન આપીને દેવીએ સજ્જનને સેનાપતિના સ્થાને સ્થાપ્યો. પછી બ્રાહ્મ સુહૃત્તમાં સજ્જન પોતે હાથી પર આરૂઠ થયો અને સમસ્ત સૈનિકોને તેણે યુદ્ધને માટે સજ્જ કર્યા અને હાથીના કુંભસ્થલપર બેસીનેજ અક્ષમાલિકા નોકારવાળી સ્થાપનાચાર્ય તરીકે સ્થાપિને તેણે પ્રતિક્રમણ કરી લીધું, કારણ કે તેવા પુરૂષો સમયજ્ઞ હોય છે એવામાં પાસે રહેનારા આ પ્રમાણે ચિંતવવા લાગ્યા કે:—‘ આ સ્વામી શું યુદ્ધ કરશે ? કારણકે આ તો ધાર્મિક છે અને યુદ્ધ તો નિર્દય મનવાળા માણસો કરી શકે.’ પછી બે ઘડી થતાં સમાધિપૂર્વક પ્રતિક્રમણ કરી અને સામાયિક પારીને તેણે બધું સૈન્ય ચલાવ્યું. તે વખતે હાથીપર રહીને પણ ચતનાપૂર્વક પ્રતિક્રમણ કર્યું, તે પણ પોતાના સૈન્યને એકત્ર થવા માટેજ અન્યથા તે શિથિલ થઈ જાય અથવા પ્રતિક્રમણ વેલાને વ્યતિક્રમ થાય—એ હેતુ પણ સંભવે છે, કારણકે અવસરે કરવામાં આવેલ બધું કાર્ય ઉપયોગી થાય છે.

પછી બંને સૈન્ય વચ્ચે મંહાયુદ્ધ શરૂ થયું અને હાથી, અશ્વ, રથ અને પદાતિ (પાળા) વિગેરે બધા યથાક્રમે હાજર થયા, એટલે તે વખતે સત્જનને એવી રીતે યુદ્ધ કર્યું કે જેથી યવનોતું સૈન્ય એક ક્ષણવારમાં કાકપક્ષીની જેમ ભાંગી ગયું પણ તે વખતે સત્જનના શરીરમાં હશ ઘા વાગ્યા તેથી તેને ઉપાડીને સૈનિકો દેવીપાસે લઈ ગયા અને તે પણ તેનો પ્રતીકાર કરવા લાગી. પોતાના દુકુલના છેડાથી તેને પવન નાખવા લાગી અને મોટા વૈદ્યોને તેણે બોલાવ્યા એટલે તેઓએ પણ પ્રતિક્રિયાઓ કરી એવામાં સુભટોએ દેવીની આગળ કહ્યું કે:—‘હે સ્વામિની ! એ રાત્રે ‘અર્ગિ-દિયા વેઈંદિયા ’ ઇત્યાદિ બોલતો અને પ્રભાતે એવું યુદ્ધ કર્યું કે જેવું કોઈ પણ ન કરે એ શું કહેવાય ? એટલે દેવીએ સત્જનને કહ્યું કે:—‘ આ શું તમે વિરૂદ્ધ કર્યું ? તે બોલ્યો કે:—‘ હે સ્વામિની ! રાત્રે મેં પોતાનું કાર્ય કર્યું અને પ્રભાતે તમારું કાર્ય કર્યું, કારણકે આ મારું શરીર તમારે આધીન છે, વળી મન મારે સ્વાધીન છે તેથી મેં મારું કાર્ય કર્યું. આ પ્રમાણે સાંભળી તેઓ તેની પ્રશંસા કરવા લાગ્યા કે:—‘ અહો ! એની ધર્મમાં દૃઢતા કેટલી છે ’ પછી દેવી પાટણ ગઈ અને સત્જનને પણ વૈદ્યોએ અનુક્રમે સાજો કર્યો. એટલે તે રાજકાર્ય અને ધર્મકાર્ય કરવા લાગ્યો.

આ પ્રમાણે સંકટમાં પડતાં પણ જેઓ પોતાના નિયમને છોડતા નથી, મોક્ષસુખ તેમના હાથમાં જ છે. વળી બીજી રીતે બુદ્ધજનો દિવસનું, રાત્રિનું, પક્ષનું, ચાતુર્માસનું અને સંવત્સરનું એમ પ્રતિક્રમણને પાંચ પ્રકારે કહે છે. કહ્યું છે કે:—“ પ્રથમ અને અંતિમ તીર્થકરના સાધુઓનો અવશ્ય પ્રતિક્રમણ કરવાનો આચાર

છે અને મધ્યમ જિનોના સાધુઓ કારણવશાત્ પ્રતિક્રમણ કરે છે. પ્રથમ અને છેલ્લા તીર્થકરોના સાધુઓ અને શ્રાવકોને અવશ્ય કરવાનું હોવાથી તેનું આવશ્યક એવું નામ છે.

इत्थं प्रतिक्रमणमप्यनगुप्रमाद—

मुत्सृज्य भव्यनिवहाः ! क्रियतां भवद्भिः ।

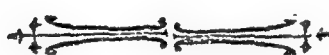
यस्मिन्कृतेऽथ भवभारवियुक् शरीरी,

भारप्रमुक्त इव भारवहो लघुः स्यात् ॥ ૧ ॥

આ પ્રમાણે લેશ માત્ર પ્રમાદનો પણ ત્યાગ કરીને હે સ્વયં જનો ! તમે પ્રતિક્રમણ કરો. જે પ્રતિક્રમણ કરવાથી પ્રાણી સંસારના ભારથી રહિત થઈ ભારમુક્ત ભારવહુ—મન્યૂરની જેમ હલવેા થાય છે.

॥ इति श्री उपदेशसप्ततिकायां पंचमेऽधिकारे त्रयोदश

उपदेशः ॥ ૧૩ ॥



चतुर्दश उपदेश.

જે દાનાદિક ધર્મના વિશેષ પોષણને ધારણ કરે છે, માટે મહાજનો તેને પૌષધ કહે છે. સુદત્ત વ્યવહારીની જેમ કોઈ ભાગ્યવંત જનોજ તે પૌષધને આરાધી શકે છે. કહ્યું છે કે:—‘પૌષધ અને સામાયિકમાં રહેલા જીવનનો જે કાલ જાય છે, તે સફળ છે. અને શેષ કાલ સંસારના ફળનો હેતુ છે.’

સુદત્ત વ્યવહારીની કથા.

કુસુમપુરમાં સૂર્યયશા નામે રાજા હતો. તેનો જિનધર્મથી વાસિત એવો મિત્રાનંદ નામે મંત્રી હતો. એકદા સભામાં રાજા અને મંત્રીનો વિવાદ થયો. તેમાં રાજાએ કહ્યું કે:—‘ અહીં વ્યવસાયજ પ્રમાણ કરવા લાયક છે. પુણ્યોથી શું ? વ્યવસાયીને બધું ફલદાયક થાય છે. કારણ કે સુતેલાના મુખમાં ક્યાંય ફલાદિક આવીને પડતા નથી. ’ એટલે મંત્રી બોલ્યો કે:—‘ પુણ્યજ પ્રમાણ કરવા લાયક છે, અંધક્રિયાની જેમ અફલ એવા વ્યવસાયથી શું ? વળી શાસ્ત્રમાં પણ એમ સાંભળવામાં આવે છે કે:—

“ નૈવાકૃતિઃ ફલતિ નૈવ કુલં ન શીલં,

વિદ્યાપિ નૈવ નચ યત્નકૃતા પિ સેવા ।

માગ્યાનિ પૂર્વતપસા કિલ સંચિતાનિ

કાલે ફલંતિ પુરુષસ્ય યથૈવ વૃત્તાઃ ॥ ૧ ॥

‘ કુળ, શીલ, આકૃતિ વિદ્યા અને યત્નથી કરવામાં આવેલ સેવા પણ ફળતી નથી. પરંતુ પૂર્વ તપથી સંચિત કરેલ ભાગ્યજ પુરુષને અવસરે વૃક્ષની જેમ ફળે છે ’ એટલે રાજા બોલ્યો કે:—‘ જો એમ હોય તો તું વ્યાપારને તજીને હમણાજ ક્યાંક ચાલ્યો જા, ઘરે પણ તારે જવું નહિ. ’ આથી પુણ્યને પ્રમાણ કરનાર મંત્રી સર્વ પરિજનને મૂકીને તેજ વળતે અને તેજ પગલે નગરની બહાર નીકળ્યો પછી આગળ જતાં ક્યાંક સરેવરમાં સ્નાન કરીને વિશ્રાંત થઈ જેવામાં ક્ષણભર વૃક્ષની નીચે બેઠો, તેવામાં એક દિવ્ય પુરુષને તેણે જોયો એટલે તે દિવ્ય પુરુષ બોલ્યો કે:—‘ હે મંત્રિન ! તું પ્રસન્ન થઈને વાંછિતસિદ્ધિને

આપનાર આ ચિંતામણિને ગૃહણ કર અને મારાપર અનુગ્રહ કર’ એમ કહી તે ચિંતામણિ તેને સોંપીને પોતાનું સ્વરૂપ કહ્યા વિનાજ તે અદૃશ્ય થઈ ગયો. આથી અમાત્ય અત્યંત હર્ષિત થઈ ‘રાજાને હવે પુણ્યપ્રભાવ દર્શાવું’ એમ ચિંતવતાં તે મણિની અર્ચા કરીને તેણે તેની પાસે ચતુરંગ સૈન્ય માગ્યું. એટલે તેના પ્રભાવથી ચતુરંગ સેના સમન્વિત થયેલ મંત્રીએ હાથમાં લેખ આપીને હૂતને પોતાના નગરમાં રાજાની પાસે મોકલ્યો. અને તે હૂતે ત્યાં જઈને રાજાને કહ્યું કે:—‘હે રાજા! પુણ્યથી સૈન્યને પ્રાપ્ત કરી મંત્રી આવ્યો છે. માટે જો પરાક્રમ હોય તો તેની સાથે યુદ્ધ કરવા બહાર આવ.’ આ પ્રમાણે હૂતે જણાવેલ તેવા પ્રકારના સૈન્યના યોગને સાંભળીને રાજાએ સમસ્ત સલાસદોની સમક્ષ આ પ્રમાણે કહ્યું કે:—‘હે સભ્યજનો! આ જગતમાં પુણ્યજ કેટલું શ્રેષ્ઠ છે, તે જુઓ. એ મંત્રી એકાકી નીકળ્યો હતો છતાં અત્યારે આવી સંપત્તિને પામ્યો.’ પછી રાજાએ સન્મુખ જઈ માન મૂકીને તેને આલિંગન કર્યું અને પ્રમોદ તથા વિસ્મયથી વિકસ્વર થઈને તેને નગરમાં પ્રવેશ કરાવ્યો. પછી તે બંનેએ લોકોને ધર્મમાં દૃઢ કર્યા. એવામાં એકદા ચતુર્સાનધર એક આચાર્ય ત્યાં પધાર્યા એટલે રાજા અને પ્રધાન પરિવાર સહિત તેમને વંદન કરવા ગયા અને સાવધાન થઈને તેમણે ધર્મદેશના ત્યાં સાંભળી. પછી અવસરે રાજાએ પૂછ્યું કે:—‘હે ભગવન્! આ મંત્રીને જેણે ચિંતામણિરત્ન આપ્યું તે કોણ? એ જાણાવો.’ એટલે ગુરૂ બોલ્યા કે:—

‘પૂર્વે પદ્માપુરીમાં સમ્યક્ત્વ અને બાર વ્રતથી વિભૂષિત એવો સુદૃઢ નામે પરમ શ્રાવક શ્રેષ્ઠી હતો. એક દિવસે તેણે

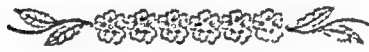
અહોરાત્રનું પૌષધ વ્રત લીધું અને વિધિપૂર્વક યોગ નિદ્રા કરતો રાત્રે તે સુતો એવામાં તે વળતે તેના ઘરમાં કોઈ ચોર નિર્ભય થઈને પેઠો. ઘરનું સર્વસ્વ ચોરીને પાણીના પૂરની જેમ ચાલ્યો ગયો. શ્રેષ્ઠી તે વળતે જાગતોજ હતો અને તેને જાણતાં છતાં પાપભીડ અને વ્રતાંતિચારની શંકાથી તે ધર્માત્માએ તે ચોરને પકડવા કોઈને પ્રેરણા પણ ન કરી, પછી પ્રભાતે તેણે પૌષધ પારીને પારણું કર્યું પણ તે વૃત્તાંત તો તે ગંભીરે પોતાના પુત્રાદિકને પણ જણાવ્યો નહિ. એવામાં એક દિવસે તેજ ચોર હાર લઈને સુદત્તના કોઈ હાટે વેચવા આવ્યો, એટલે તેના પુત્રે તે જોયો. અને તે હાર પોતાનો સમજીને તે ચોરને રાજપુરૂષોને હવાલે કયો, એટલે તેઓ સર્વની સમક્ષ તે ચોરને વધભૂમિ તરફ લઈ ગયા. એવામાં શ્રેષ્ઠીએ તેને તેવી અવસ્થામાં આવેલો જોઈને દયાની લાગણીથી તે રાજપુરૂષોને કહ્યું કે:—‘ અરે ! એને છોડી મુકો. મેંજ એને હાર આપ્યો હતો, તે પુત્રો વિગેરે જાણતા નથી.’ આથી ‘ શ્રેષ્ઠી મિથ્યાવાદી નથી ’ એમ ધારીને તેમણે ચોરને મુક્ત કર્યો. પછી શ્રેષ્ઠીએ એકાંતમાં ચોરને શિખામણ આપી કે:—‘ હે ભદ્ર ! અકાર્યમાં તારે મતિ ન કરવી. કારણ કે આ મનુષ્યભવ દુર્લભ છે.’ આ પ્રમાણે તેની સુજનતા અને ઉપકારને સ્મરણમાં લાવતો તે તસ્કર દીક્ષા અને અનશન લઈને સૌધર્મદેવલોકમાં દેવ થયો. અને ચિરકાલ નિરતિચારપણે પૌષધવ્રત પાલવાથી તે શ્રેષ્ઠી ધર્મવાન અને ભાગ્યવંત આ સચિવ થયો છે. દેવતાએ અવધિજ્ઞાનથી પૂર્વ સવના ઉપકારને જાણીને તારા સંકટમાં પડેલા એને તે વળતે તરત ચિંતામણી રત્ન આપ્યું.’ એવા અવસરમાં તે દેવ પણ ત્યાં આવીને તે મંત્રીને કહેવા લાગ્યો કે:—‘ હે ભદ્ર ! તારું શું ઇષ્ટ કર્મ ?’ તે જોલ્યો કે—‘ સર્વત્ર યાત્રા કરાવ.’ પછી તે દેવની સાથે નંદીધરાદિક તીર્થોની યાત્રા કરીને પાછા વળતાં લવણસમુદ્રપર

આવતાં કર્મ ક્ષય થવાથી તેને ઉત્તવદ્વ કેવલજ્ઞાન ઉત્પન્ન થયું અને તરત આયુ ક્ષય થતાં મુક્તિ પ્રાપ્ત થઈ.

આ પ્રમાણે પૌષધવ્રતપર પણ પ્રગટરીતે દૃષ્ટાંત કહેવામાં આવ્યું. માટે હે ભવ્ય ભવિકો ! તે વ્રતમાં કેમ આદર કરતા નથી ?

॥ इति श्रीउपदेश सप्ततिकायां पंचमेऽधिकारे

चतुर्दश उपदेशः ॥ १४ ॥



પંચદશ ઉપદેશ.

હે ભવ્ય જનો ! તમારે સંસારની વાસના ન હોય, તે સુપાત્રે વિત્ત વાપરો. કારણ કે અસાર સંપત્તિનું દાન સિવાય બીજું તેવું અક્ષીણ ફળ જોવામાં આવતું નથી.

ભદ્રક શ્રેષ્ઠીની કથા.

પૂર્વ અવનિપુરમાં નામ અને પ્રકૃતિથી સમાન એવો ભદ્રક નામે રાજમાન્ય શ્રેષ્ઠી હતો. તેને સ્ત્રી પણ તેના સદૃશ ગુણવાળીજ હતી. એકદા ગુરૂના મુખથી ધર્મ સાંભળીને તે દંપતીએ તેમની પાસે કેટલાક અકૃત્રિમ અભિગ્રહ લીધા—ત્રિકાલ જિનપૂજા, જેવાર અતિક્રમણ, એકાંતરે ભોજન, સુપાત્રે દાન, અને સચિત્તનો ત્યાગ—એ વિગેરે નિયમો શ્રેષ્ઠીએ લીધા અને સ્ત્રીએ પણ તે બધા નિયમો લીધા. પછી ગુરૂમહારાજને નમસ્કાર કરીને તે બંને ઘરે ગયા અને કેટલાક કાલપર્યંત તેમણે ધર્મની આરાધના કરી.

હવે એકદા પૂર્વ કર્મના યોગે તેવું ધન ક્ષીણ થઈ ગયું.

એટલે તેને કોઈ વાનર જેવો પણ ગણતા ન હતા. તેથી સ્ત્રીએ તેને કહ્યું કે:—‘ તમે માતાં પિતાના ઘરે જાઓ, ત્યાં મારા ભાઈઓ ધનાઢ્ય છે, માટે તે તમને કંઈક દ્રવ્ય આપશે. હે પ્રભો ! તે દ્રવ્યથી વ્યવસાય કરીને તમે સ્વસ્થ થાઓ. ’ આમ કહેતાં પણ ત્યાં જવાનો તેને લેશ પણ ઉત્સાહ ન વધ્યો. ખરેખર ! સસરાને ઘેર જવું એ માણસોને લજ્જાસ્પદ છે. પછી તેણે અતિ પ્રેરણા કરી એટલે તે સાથવાનુંજ ભાતું સાથે લઈને ચાલ્યો. બીજે દિવસે કોઈ પ્રદેશમાં શ્રી જિનપૂજન કરીને પારણાની ઈચ્છાથી તે સાથવાને ઝરણાના જળથી પલાળ્યો. તે વખતે તેના ભાગ્ય યોગે પ્રેરાયેલા કોઈ સંયત ત્યાં આવ્યા, તેમને તે આપીને શેષ પોતે જમ્યો. પછી તે પાત્રદાનથી પ્રમોહ પામતો તે ચોથે દિવસે કંઈક લજ્જિત થઈ સસરાને ઘેર ગયો. પરંતુ તેમણે સ્વાગતાદિ પણ કર્યું નહિ અને તેને ધન રહિત જોઈને તેઓ તેનો અત્યંત અનાદર કરવા લાગ્યા. તથાપિ પોતાના નિર્વાહને યોગ્ય તેણે કંઈક ચાચના કરી એટલે તે સસરા વગેરે પણ તેને એમ કહેતા લાગ્યા કે:—‘ હે શ્રેષ્ઠિન્ ! તમારા જેવાને અદેય શું છે ? પણ હાલ તેવો વ્યાજ કે વેપાર ચાલતો ન હોવાથી તેવો યોગ નથી. છતાં પણ જો કુળદેવી કહેશે, તો તેટલું ધન તમને આપીશું. કારણ કે તે અમારે કામધેનુ સમાન છે. ’ પછી તેમણે કુળદેવીને પૂછ્યું. એટલે તે બોલી કે:—‘ અત્યારે રસ્તામાં એણે જે દાનપુણ્ય કર્યું છે, તેનો છટ્ટો ભાગ જો એ તમને આપે, તો છ લક્ષ સોનામહોર એને આપો. ’ આ પ્રમાણે દેવીનું વચન સાંભળીને તેમણે તેની આગળ તે નિવેદન કર્યું. એટલે તે બોલ્યો કે:—‘ હું મારા પુણ્યનો લેશ પણ તમને આપવાનો નથી. તમારા બધા દ્રવ્યની કીંમત, મારા દાનના કોટીમા ભાગમાં પણ થઈ શકે તેમ નથી. ’

પછી તે સત્ત્વને અવલંબીને પોતાના નગર તરફ આડ્યો અને અનુક્રમે પોતાના નગરની પાસે આવેલ નદી પર આવીને તે વિચારવા લાગ્યો કે:—‘ અહો ! જૈનધર્મની પ્રાપ્તિથી સદા સંતુષ્ટ રહેનાર મારે ધનથી શું ? પરંતુ શું કરું કે મારી સ્ત્રી ખેદ કરે છે. જેણે મોટા મનોરથ કરી મને ત્યાં મોકલ્યો, અને હવે આવી સ્થિતિમાં મને જોઈને તે મૃત તુલ્ય થઈ જશે. માટે આ ઉજ્જવલ અને ગોળ નદીના કાંકરાની પણુ ગાંસડી બાંધીને ઘરે જાઉં કે જેથી તે પ્રસન્ન થાય. ’ એમ વિચારી તેના એક મોટો પોટલો માથે લઈને શ્રેષ્ઠી ઘરે આવ્યો, એટલે તે પણુ સન્મુખ આવી. અને ‘ અહો, મારો ભર્તાર બહુ ધન લઈને આવેલ છે. ’ એમ સુખને વિકસિત કરતી એવી તેણે તેના મસ્તકપરથી ગાંસડી ઉતારીને ક્યાંક ખુણામાં રાખી. એવામાં પૂજા અને સત્પાત્રદાનાદિ ધર્મના માહાત્મ્યથી તે કાંકરા બધા જાલ્યરત્ન થઈ ગયા. પછી બીજે દિવસે તેમાંના એક રત્નમાંથી પોતાના ભર્તારને માટે સારી સારી વસ્તુઓ મેળવીને તેણે શ્રેષ્ઠ ભોજન તૈયાર કર્યું અને ભોજનાવસરે પતિને રત્નનું સ્વરૂપ પૂછ્યું. એટલે ‘ અરે ! આ શું ? ’ એમ સંભ્રાંત થઈને તેણે પણુ પોતાનો વૃત્તાંત નિવેદન કર્યો. પછી ‘ આ બરેબર આપણા ધર્મનોજ પ્રભાવ છે. ’ એમ ધારીને તે દંપતી ધર્મમાં અધિકતર નિશ્ચલ થયા.

इत्थमेष पुनरद्भुतसंप-

त्प्राप्तितोऽजनि नृपादिषु मान्यः ।

पात्रदानजिनपूजनमुख्यं,

पुरयमेव भविकाः क्रियतां तत् ॥ ૧ ॥

આ પ્રમાણે પુનઃ અદ્ભુત સંપત્તિની પ્રાપ્તિથી તે રાજા વિગેરેમાં માનનીય થયો. માટે હે ભગ્યજનો ! સુપાત્રદાન અને જિનપૂજન વિગેરેજ પુણ્ય કરો. કે જેથી શિવસુંદરી તમારા પર પ્રસન્ન થાય.

॥ इति श्री उद्देशसप्तिकायां पंचमेऽधिकारे

पंचदश उद्देशः ॥ १५ ॥

षोडश उपदेश

ગુણવંત જનોમાં ગુણાનુરાગ કરતા સાધર્મિ ખંધુઓનું શ્રી દંડવીર્યની જેમ શ્રાવકોએ પ્રકુલિલત મનથી વાતસલ્ય કરવું ઉચિત છે.

શ્રી દંડવીર્યની કથા.

શ્રી ભરતના વંશમાં અયોધ્યામાં તેજ અને યશના નિધાનરૂપ દંડવીર્ય નામે આઠમે રાજા થયો. ત્રણ ખંડ વસુધાના મંડનરૂપ એવો તે શ્રાદ્ધલોજન રૂપ ભરતના આચારને સારી રીતે સાચવતો હતો. એકદા અત્યંત ભક્ત એવા સોળ હજાર રાજાઓની હાજરીમાં તે રાજસભામાં શ્રેષ્ઠ સિંહાસનપર બેઠો હતો એવામાં ભરતેશ્વર પછી છ કોટી પૂર્વ ગયા ત્યારે સૌધર્મેન્દ્ર સભામાં બેસીને ભગવંતના ગુણોનું સ્મરણ કરતો હતો અને તેમના સ્તંકડો શાખાયુક્ત વંશમાં તેવા પ્રકારના પુરુષરત્નની સ્તુતિ કરતાં સભામાં બેઠેલા સૌધર્મેન્દ્રે પોતાની જ્ઞાનચક્ષુથી જગતના આલંબન

રૂપ, બલિષ્ઠ અને આહુત ધર્મનો આદર (પ્રભાવ) કરતા એવા દંડવીર્યને જોયો. પછી દેવેન્દ્ર શ્રાવકનો વેષ લઇને અયાધ્યામાં આવ્યો અને હાથ ઉંચે કરીને રાજાને તેણે આશીર્વાદ આપ્યો. એટલે ભરત રાજાએ બનાવેલ ચાર વેદને બોલતા, દૃષ્ટિથી જોઇને જમીનપર ચરણ મૂકતા પ્રહાર્યારી, બાર વ્રત ધારણ કરેલ હોવાથી તેટલાજ તિલકને ધારણ કરતા અને હૃદયમાં પહેરેલ સુવર્ણની જનોઇથી સુશોભિત એવા તેને જોઇને દંડવીર્ય તેનાપર પ્રસન્ન (રાગી) થયો. કારણકે કિયાના આડંબર પ્રમાણેજ લોકાદર હોય છે. પછી રાજાએ પૂછ્યું કે:—‘ હે ભદ્ર ! આપ ક્યાંથી આવ્યા ? અને ક્યાં જવા ધારો છો ? ’ એટલે તે માંયાથી બોલ્યો કે:—‘ હે નરાધિપ ! શ્રાવકવેષધારી એવો હું અમરાવતી નગરીથી તીર્થ-યાત્રા કરતાં આવે અહીં આવ્યો છું. અહીં શકાવતાર નામના ચૈત્યમાં શ્રીઋષભ પ્રભુને સ્તવીને અને આપને જોઇને મેં મારા આત્માને પવિત્ર કર્યો. ’ પછી તેના લોજનને માટે રાજાએ રસો-યાઓને આજ્ઞા કરી. એટલે તે બોલ્યા કે:—‘ આજ તીર્થોપવાસ કરવાની ઇચ્છા છે. ’ પરંતુ રાજા વિગેરેએ ઉપવાસ કરતાં અટકાવ્યો, એટલે તે દૃષ્ટિપૂર્વક ચાલતાં દાનશાળામાં આવ્યો. ત્યાં કેટલાક ઉદ્યમ કરી વેદાદિક શાસ્ત્ર લખતા, કેટલાક ધ્યાન કરતા, કેટલાક આચાર શીખવતા, કેટલાક ત્રિશુદ્ધિથી ત્રિકાલ દેવપૂજાને માટે જ્ઞાન કરતા એવા શ્રાવકોને અનુક્રમે જોઇને તે પરમ હર્ષ પામ્યો. એવામાં ‘ હે શ્રાદ્ધ ! તમને નમસ્કાર છે ’ એમ ઉભા થઇને બોલતા એવા તેમની સાથે તે પાવન જળથી આચમન કરીને ગૃહ-માં ગયો. ત્યાં કોટી શ્રાવકોને માટે તૈયાર કરેલ રસોઇ તે કપટ શ્રાવક દિવ્ય પ્રભાવથી એક ક્ષણવારમાં ઉઠાવી ગયો. અને બોલ્યો કે:—‘ અરે ! કુધાથી વ્યાકુળ થયેલા મને લોજન પિરસો. હે

રૂપકારો ! દંડવીર્યને શામાટે લજ્જાપાત્ર કરો છો ? ' આ સ્વરૂપ ચરપુરુષોએ રાજાને જણાવ્યું એટલે તેણે પોતે આવીને મા-
સોપવાસીની જેમ તેને ક્ષીણકુક્ષિવાળો જોયો પછી તે
માયાવી શ્રાવક પણ શ્રદ્ધાસંયુક્ત તે રાજેન્દ્રને જોઈને દીનભાવને
પ્રકાશતાં કઠિન ભાષામાં બોલ્યો કે:—‘ હે રાજન્ ! તેં શ્રાવકોને
ઠગવા માટે આ રસોયા રાખ્યા છે. કારણકે બુદ્ધિશક્તિ ભૂખ્યા એવા
મને એકને પણ એઓ સંતોષ પમાડી શકતા નથી. ’ આ પ્રમાણે
સાંભળીને કંઈક ક્રુષ્ણ થઈને રાજાએ પોતાની નજર આગળ રસો-
યાઓ પાસે સો મૂડા અન્ન રંધાવ્યું. એટલે રાજાના દેખતાં ઇંધન-
સંચયને જેમ અગ્નિ લક્ષણ કરે, તેમ તે પોતાની માયાથી તે અન્નને
એક ક્ષણવારમાં જમી ગયો. અને તે માયાશ્રાવક પુનઃ બોલ્યો
કે:—‘ જે પૂર્વજોના કુળ, કીર્તિ અને પુણ્યને અધિકતા ન પમાડે
તેવા પુત્રથી પણ શું ? હે ભૂપ ! શ્રાવકોને ભોજન આપવારૂપ
માયાને મૂકીદે, લજ્જાને તણદે. ભોજનશાળાના આડંબરને
ધારણ કરી તું માણસોને શા માટે છેતરે છે ? ’ આવી તેની નિષ્કુર
વાણી સાંભળીને પણ તે કોપાયમાન ન થયો, પણ પોતાના પુણ્યની
અપૂર્ણતાને સમજી ઉલટો તે પોતાનેજ નિંદવા લાગ્યો. એવામાં
રાજાના ભાવને જાણીને મંત્રી પવિત્ર ભાષામાં બોલ્યો કે:—‘ હે
સ્વામિન્ ! શ્રાદ્ધરૂપ કરી છળ કરનાર એ કોઈક દેવ લાગે છે. માટે
જો શ્રાવકના વેષ પર તમારે ભક્તિભાવ હોય, તો હે નૃપ ! તે અંદન,
અગર, કર્પૂર અને કસ્તૂરી પ્રમુખથી પૂર્ણ કરો. ’ આ પ્રમાણે સાંભ-
ળીને રાજાએ તેની આગળ ભક્તિપૂર્વક અંદનાગરમિશ્રિત ધૂપ
કર્યો અને કોમળ વચનથી કહ્યું કે:—‘ હે દેવ ! શ્રાવકવેષથી અહીં
મને પાવન કરવા આવનાર તમે કોણ છો ? તે કહો અને મારાપર
કૃપા કરી પ્રગટ થાઓ. ’ આથી ઈંદ્રે પોતાનું રૂપ પ્રગટ કરીને કહ્યું

કે:—‘હે રાજન્ ! તુંજ ધન્ય છે, કે જેની સાધર્મિક બંધુપર આવી ભક્તિ છે. જગતમાં પોતાના ઉદરને ભરનારા કોટીજનો હશે, પરંતુ એક સાધર્મિકતું પણ વાતસલ્ય કરનારા વિરલા હશે.’ આ પ્રમાણે નિષ્કપટભાવથી ઇંદ્ર તેની પ્રશંસા કરીને કોટી રત્નની વૃષ્ટિ કરી અને દિવ્ય ધનુષ્ય આપીને પોતાની રાજધાનીમાં આદ્યો ગયો. અને શ્રીદંડવીર્ય ભૂપાલ પણ શ્રીશત્રુંજય તીર્થની યાત્રા કરી, શ્રીસંઘપતિના પદને પામી અને આત્માના આદર્શરૂપ કેવલ-લક્ષ્મીને ઉપાર્જન કરીને અનુક્રમે મોક્ષનગરમાં પધાર્યા.

॥ इति श्रीउपदेश सप्ततिकायां पंचमेऽधिकारे

षोडश उपदेशः ॥ १६ ॥

સપ્તદશ ઉપદેશ.

આસ્તિક શ્રાવકોએ શ્રીજ્ઞાનદ્રવ્ય અને સાધારણ દ્રવ્યને પોતાની ઇચ્છા પ્રમાણે નહિ, પણ સંઘની અનુમતિ પ્રમાણે વાપરવું. આ સંબંધમાં પણ શ્રીજિનઆંગમમાં કહેલ એ શ્રાવકનું ઉદાહરણ અહીં આપવામાં આવે છે.

એ શ્રાવકની કથા.

લોગપુર નગરમાં કોટી કનકનો સ્વામી ધનાવહ નામે શેઠ હતો, તેની ધનવતી નામની પત્ની હતી. તેમને કર્મસાર અને પુણ્યસાર નામના સાથે જન્મેલા બે પુત્રો હતા. એકદા પિતાએ એક નૈમિત્તિકને પૂછ્યું કે:—‘આ કેવા થશે ?’ તેણે કહ્યું કે:—‘કર્મસાર સ્વભાવે જડ, અત્યંત બુદ્ધિરહિત, વિપરીત બુદ્ધિ-

પણુથી બહુ પ્રયત્ન કરતાં પણ પૂર્વના દ્રવ્યને શુભાવનાર અને નવીન દ્રવ્યને ઉપાર્જન કરવાના અભાવથી બહુ કાલ દરિદ્રતાદિકથી દુઃખી થશે. અને પુણ્યસાર પણ પૂર્વ દ્રવ્ય અને નવીન ઉપાર્જિત દ્રવ્યની વારંવાર હાની થવાથી તેજ પ્રમાણે દુઃખી થશે, પરંતુ જાને વેપારકળામાં કુશળ થશે. જાનેને વૃદ્ધપણામાં ધન, સુખ અને સંતતિ વિગેરે થશે.' પછી અનુક્રમે તે જાનેને ભણાવવા ઉપાધ્યાયને સોંપ્યા. એટલે પુણ્યસાર સુખપૂર્વક (અનાયાસે) બધી વિદ્યાઓ શીખ્યો. અને કર્મસારને તો એક અક્ષર પણ આવડ્યો નહિ. તે પશુ જેવો વાંચન કે લેખનાદિક પણ કરી શકતો ન હતો. એટલે પાઠકે તેને ભણાવવાનું મૂકી દીધું. પછી તે જાને યૌવનસ્થ થયા એટલે માતપિતાએ તેમને ઉત્સવપૂર્વક મોટા શેઠની કન્યાઓ પરણાવી. 'આ જાનેમાં પરસ્પર કલહ ન થાય' એમ ધારીને પિતાએ તેમને બાર બાર કોટી સુવર્ણ આપીને અલગ રાખ્યા. અને પોતે (માખાપ) દીક્ષા લઈને સ્વર્ગસ્થ થયા.

હવે પોતાની તેવા પ્રકારની કુખુદ્ધિથી સ્વજનાદિક અટકાવે, છતાં જ્યાં વેપાર કરે, ત્યાં તુકશાનીજ આવી પડવાથી કર્મસારે બારે કનકકોટી શુભાવી. અને પુણ્યસાર પણ રાજ, ભાગીદાર, તસ્કર અને અગ્નિ વિગેરેના ઉપદ્રવને લીધે થોડા વખતમાંજ બધું સુવર્ણ શુભાવી બેઠો. એટલે તે જાને દરિદ્ર થઈ ગયા, તેથી સ્વજનાદિકોએ તેમનો ત્યાગ કર્યો અને સ્ત્રીઓ પણ ક્ષુધાની મારી પિતૃગૃહે આવી ગઈ. કારણકે—'ધનવંતના ખોટા સ્વજનપણાને પણ લોકો રહાય છે અને ધનહીન પોતાના નજીકના ખાંધવથી પણ લજ્જા પામે છે. ધનહીન શુભવંતને પણ તેના પરિજનો બરેબર નિર્ગુણી ગણે છે અને સધન ખોટા

દાક્ષિણ્યાદિ ગુણોથી પણ આદરપાત્ર થાય છે.’ પછી ‘આ નિર્બુદ્ધિ અને નિર્ભાગી છે.’ એમ લોકોએ તેમનું નવીન નામ સ્થાપન કર્યું. આથી તેઓ પગલે પગલે અપમાન પામતા હોવાથી લલ્લિત થઈને દેશાંતર ચાલ્યા ગયા. ત્યાં અન્ય ઉપાયના અભાવથી ભિન્ન ભિન્ન સ્થાને કોઈ શ્રેષ્ઠીના ઘરે નોકરી રહ્યા. હવે જેને ઘેર કર્મસાર નોકર હતો, તે હુઆઈથી વ્યવહાર ચલાવતો અને કૃપણ હતો. તેથી કહ્યાં છતાં પગાર ન આપતો તથા ‘અમુક દિવસે આપીશ.’ એમ કહીને તેને તે છેતરતો હતો. તેથી બહુ દિવસ જતાં પણ તે કાંઈ કમાઈ ન શક્યો. અને બીજાએ કંઈક કમાવ્યું અને કંઈક પ્રયત્નથી ગોપવ્યું છતાં તે કોઈ ધૂર્ત ચોરી ગયો. એ પ્રમાણે અન્ય અન્ય સ્થાનોમાં નોકરી, ધાતુર્વાદ, સત્યવાદ, સિદ્ધ-પુરુષ, રસાયન, રોહણાચલમાં ગમન, મંત્રસાધન અને રૂદંતી વિગેરે ઓષધિના ગ્રહણાદિકથી અગીયાર વાર કમાવેલ ધન પણ કુબુદ્ધિ, પ્રમાદ અને અભાગ્યના વશથી તેમણે ગુમાવ્યું. પછી ઉદ્વેગ પામી વહાણમાં બેસીને રત્નદ્વીપમાં ગયા, અને ત્યાં દ્વીપની અધિષ્ઠાયક દેવી આગળ મરણને અંગીકાર કરીને પણ બેઠા. એટલે આઠમે દિવસે દેવીએ કહ્યું કે—‘તમારા ભાગ્યમાં નથી.’ તેથી કર્મસાર ઉઠી ગયો અને પુણ્યસારને એકવીશ ઉપવાસ થયા. ત્યારે દેવીએ ચિંતામણિરત્ન આપ્યું. એટલે પશ્ચાત્તાપ કરતા કર્મસારને પુણ્યસારે કહ્યું કે—‘હે બંધો ! ખેદ ન કર. આ ચિંતામણિરત્નથી આપણે બંને સુખી થઈશું.’ એમ વિચારી હર્ષમાં પાછા ફરી વહાણમાં બેઠા. એવામાં પૂર્ણિમાની રાત્રે ચંદ્રમાનો ઉદય થતાં મોટા બંધુએ કહ્યું કે—‘હે ભ્રાતા ! ચિંતામણિરત્નને પ્રગટ કર, આપણે જોઈએ કે ચંદ્રમા અને રત્ન—બંનેમાં કોનું જોજો અધિક છે.’ એટલે હુદ્દેવથી પ્રેરાયલા લઘુ બંધુ પણ પોતાના

ક્રીનારાપર જેસી હાથમાં રત્ન રાખીને ક્ષણવાર રત્નમાં અને ક્ષણવાર ચંદ્રમાં દૃષ્ટિ નાખી જોતો હતો, તેવામાં કલ્હોલાદિકમાં વ્યથ ચિત્ત હોવાથી તેના હાથમાંથી રત્ન સમુદ્રમાં પડી ગયું. પછી જાને સમાન દુઃખ પામતા પોતાના નગરમાં આવી દુઃખે સમય ગાળવા લાગ્યા.

હવે એકદા તે નગરમાં કોઈ કેવલી પધાર્યા. એટલે ત્યાં આવી તેમને નમસ્કાર કરીને તેમની આગળ તે જાનેએ પૂછ્યું કે:—‘હે ભગવન્! કયા કર્મથી અમારાપર આવું દુઃખ આવી પડ્યું, કે સેંકડો વર્ષો જતાં પણ જેના વર્ણનનો પારાન આવે.’ એટલે જ્ઞાની બોલ્યા કે—

‘પૂર્વે ચંદ્રનગરમાં પરમર્થિક અને પરમ શ્રાવક એવા જિનદત્ત અને જિનદાસ નામે જે શ્રેષ્ઠી હતા. એકદા અસ્તિક શ્રાવકોએ મળીને સુસ્થાનપણથી રક્ષણ કરવા જ્ઞાન દ્રવ્ય અને સાધારણ દ્રવ્ય તેમનેજ આપ્યું. અને અતુકમે જિનશાસનમાં વિજ્ઞ એવા તે જાનેએ પોતાના જીવિત અને ધન કરતાં અધિક ચિરકાલ તે દ્રવ્યની સંભાળ કરવા કાલજી રાખી. એકદા જિનદત્તે પોતાની પ્રતીમાં, લેખક પાસે આકુટીથી જોવામાં આવેલ કંઈક લખાવ્યું અને વિચાર કર્યો કે—‘આ પણ જ્ઞાનસ્થાનજ છે.’ એમ ધારી પોતાની પાસે બીજા દ્રવ્યના અભાવથી તે વળતે લખનારને તરત વિચાર વિના પોતાની ઇચ્છા પ્રમાણે તે જ્ઞાનદ્રવ્યમાંથી તેણે બાર દ્રમ્મો આપ્યા. અને ‘સાધારણ દ્રવ્ય સંઘને ઉચિત હોય’ એમ જાણતાં છતાં ‘હું પણ તે સંઘમાંજ છું’ એમ મનમાં ધારીને જિનદાસે પણ મુગ્ધપણથી પોતાની પાસે રહેલા તે સાધારણ દ્રવ્યમાંથી બાર દ્રમ્મો પોતાના પ્રયોજનમાં વાપર્યા. તે જાને શાસ્ત્રજ્ઞ છતાં આ પ્રમાણે વિવેકવિધિથી વર્જિત હોવાથી તે પાપ આલોવ્યા વિના મરણ પામીને પ્રથમ નરકમાં ગયા. આ સંજોગમાં વેદાંતીએ પણ કહ્યું છે કે:—‘પ્રાણો કંઈ આવેલા હોય, પણ જ્ઞાનદ્રવ્યમાં મતિ ન કરવી. કારણકે અગ્નિથી દગ્ધ થયેલા હજી સાજા થાય (ઉદય પામે)

પણ જ્ઞાનદ્રવ્યથી દુઘ્ધ થયેલા ઉદય ન પામે. જ્ઞાન દ્રવ્ય, બ્રહ્મ હુલ્યા, દેવદ્રવ્ય, દરિદ્રનું ધન, અને ગુરૂપત્ની—એ સ્વર્ગમાં રહેલા પ્રાણીને પણ નીચે પાડે છે.' પછી તે સર્પ થયા, અને ત્યાંથી વચમાં મત્સ્યાદિક યોનિયોમાં ભવો પૂરીને સમગ્ર નરકમાં અને સર્વ તિર્યચ્છતિમાં તે કર્મથી તેઓ ભમ્યા તથા અંગરૂઢાદિક કદર્થના તેમણે સહન કરી. એ પ્રમાણે બાર હજાર ભવો પૂરણ કરીને યથાપ્રવૃત્તકરણથી શુભ કર્મોદયની સન્મુખ થવાથી એ વ્યવહારીકુળમાં તમે બંને સહોદર થયા છો. આ દુર્લભ ભવિતવ્યતા કોને વિડંબના પમાડતી નથી ? પોતાની ઇચ્છા પ્રમાણે બાર બાર દ્રમ્ભોને વાપરવાથી ઉપાર્જન કરેલ કર્મના યોગે બાર હજાર ભવોસુધી તમને આવાં દુઃખો સહન કરવાં પડ્યાં. વળી આ ભવમાં પિતાએ દરેકને આપેલ બાર કોટી કનકનો નાશ થયો અને પગલે પગલે અપમાન સહન કરવું પડ્યું. અને વળી નવા ધનની અપ્રાપ્તિ અને પ્રાપ્ત થયેલનો નાશ—એ તેજ દુષ્કર્મરૂપ વિષવૃક્ષનું કટુફળ છે. વળી કર્મસારને આ ભવમાં જે જડતા વિગેરે છે, તે પૂર્વ જન્મમાં કરેલ જ્ઞાનદ્રવ્યના વ્યાપારનું ફળ છે. કારણ કે જ્ઞાન દ્રવ્ય દેવદ્રવ્યના જેવું હોવાથી તે અકલ્પ્ય છે. અને સાધારણ દ્રવ્ય પણ સંઘની સંમતિથી કલ્પે. શ્રીસંઘે પણ જીજ્ઞાસા પ્રમાણે તે દ્રવ્યનો સાત ક્ષેત્રોમાં વ્યય કરવો, પણ યાચકો વિગેરેને જેમ તેમ તે આપી ન દેવું. કહ્યું છે કે:—‘દેવદ્રવ્ય એકજ સ્થાને, જ્ઞાનદ્રવ્ય બે સ્થાનેજ અને સાધારણદ્રવ્ય સાત ક્ષેત્રોમાં વાપરવું—એમ જૈન સિદ્ધાંતમાં કહેલ છે.’ કદાચ જ્ઞાન વિગેરેના દ્રવ્યનો ઉપલોગ થઈ જાય, તો તેના સ્થાને પોતાનું ધન બેગણું આપવું.’ આ પ્રમાણે સાંભળીને શ્રાવકધર્મની પ્રતિપત્તિપૂર્વક પ્રાયશ્ચિત્તના સ્થાને તેમણે એવી નિયમ લીધો કે:—‘વેપાર કરતાં જે ગોઠો કે વધુ લાભ થાય, તે

સર્વ જ્ઞાન અને સાધારણ દ્રવ્યના સ્થાને અર્પણ થાઓ, કે જેથી હે મુને । તે બાર દ્રમ્મો હબ્બર ગણા થાય.' આ પ્રમાણે નિયમ લઈ તે મુનિને નમસ્કાર કરીને તે બંને સ્વસ્થાને ગયા. પછી કેટલોક વખત જતાં પ્રાયશ્ચિત્તના સ્થાને સમસ્ત દ્રવ્ય અર્પણ કરવાથી અશુભ કર્મ ક્ષીણ થઈ જતાં પૂર્વની જેમ તેમને બાર બાર કોટી સુવર્ણની પ્રાપ્તિ થઈ અને તેથી તેઓ સમસ્ત વ્યવહારી-ઓમાં મુખ્ય થયા, અને જ્ઞાન તથા સાધારણદ્રવ્યનો વધારો કરવામાં તત્પર એવા તે બંનેએ પોતાના જીવનપર્યંત જિનાજાનું આરાધન કર્યું અને પ્રાંતે પ્રૌઠ ઉત્સવપૂર્વક દીક્ષા લઈ અને ચિરકાલ તે ચારિત્ર આરાધીને અનુક્રમે સદ્ગતિના ભાજન થયા.

एवं देवज्ञानसाधारणादिद्रव्यं व्यक्त्या स्थापनीयं सुयुक्त्या ।
व्यापार्यं च श्रावकैस्तत्त्वविज्ञैर्निर्लेपत्वं स्यात्तथा चिंतनीयम् ॥१॥

ગે પ્રમાણે દેવદ્રવ્ય, જ્ઞાન દ્રવ્ય અને સાધારણદ્રવ્ય તત્ત્વર શ્રાવકોએ અચ્છી યુક્તિપૂર્વક વ્યક્ત રીતે સ્થાપન કરવું અને સુયુક્તિથી તેનો વ્યય કરવો. તથા કાલજી પણ એની રાખવી કે જેથી કોઈ પણ પ્રકારનો દોષ ન લાગે એટલે સાચવવામાં, વધારવામાં અને વાપરવામાં અચ્છીરીતે વિવેક રાખવો.

॥ इति श्रीउपदेशसप्ततिकायां पंचमेऽधिकारे सप्तदशउपदेशः ॥ १७॥

॥ इति श्रीपरमगुरुतपागच्छनायक श्रीसोमसुंदरसूरिक्रम-
कमलमरालमहोपाध्याय श्री चारित्ररत्नगणितद्विनेयपंडित
श्री सोमधर्मगणिविरचितायां श्री उपदेश-सप्ततिकायां
पंचमोऽधिकारः ॥

॥ समाप्ता चेयं श्री उपदेशसप्ततिका ॥

શ્રીગુરુપ્રશસ્તિ.

જાત્ર લાગ્યવંત, ક્ષમારસના પોષક, સંવેગ અને ચારિત્ર-
ધારી તથા ચતુર્વિધાના વિનોદી એવા મુનિવરોમાં જેમની પંક્તિ
અગ્રગણ્ય હતી, અને જેમણે શ્રીજિનશાસનરૂપ વનમાં કલિયુગમાં
પણ અજ્ઞાનવાદીરૂપ હાથીઓના અહંકારના પ્રસારને દૂર કરી
પંચાનનની ગર્જના કરી, વળી શ્રીચંદ્રકુળના શૃંગારરૂપ અને શ્રી
તપાગચ્છના નાયક એવા શ્રી સોમસુંદરસૂરિ કેને આનંદકારી
નથી ? તથા શાંતિકરસ્તોત્રના કરનારા, રાજા વિગેરેને પ્રતિબોધ
આપનાર તથા પ્રવાદને જીતનારા એવા શ્રી મુનિસુંદરસૂરિ પોતા-
ના યશોજીવનથી શોભે છે. વળી સંમતિતર્કપ્રમુખ અનેક વિષમ
અંથોને લણાવનારા એવા શ્રી જયચંદ્રગુરૂ સંઘના શ્રેયનિમિત્તે
થાઓ. દક્ષિણ દેશમાં વિહાર કરીને ઉદ્ધત કુવાદીઓના મદને
દલિત કરનારા એવા શ્રી ભુવનસુંદરસૂરિવર લબ્ય જનોના હર્ષ-
નિમિત્તે થાઓ. વળી અગીયાર અંગરૂપ સૂત્રોના અર્થરૂપ સાગરનું
મથન કરવામાં મંદરાચલ જેવા શ્રી જિનસુંદરસૂરિ કેને આનંદ
ન ઉપજાવે ? ગુરૂગચ્છના હિતને માટે તત્પર, સુકૃતમાં પરાયણ,
સંવેગી સાધુઓમાં અગ્રેસર અને સૂત્રાર્થના સંચયને ધારણ કર-
નારા એવા શ્રી જિનકીર્તિસૂરિ જયવંત વર્તો. જગતને આનંદ-
કારી વચન બોલનારા એવા શ્રી વિશાલરાજસૂરિ જયવંત વર્તો.
જેમનું શરીર દગ્ધ થતાં પણ ચોલપટ્ટો લસ્મ ન થયો. અનેક
નવીન સદ્ગુણની યુક્તિથી સરસ બહુ ગરિષ્ઠ, તથા અમૃતના કુંડ-
સમાન સ્વોપજ્ઞ અંથોથી જગતના તાપને દૂર કરવાને સમર્થ,
ઉપકાર કરવામાં અગ્રેસર, સદા જાત્ર પ્રતાપવાળા, મેઘની જેવા
જેન શાસનરૂપ વનને નવપદલવિત કરનારા, ગચ્છાધિપતિની પદ-

વીને દીપાવનારા, શાસ્ત્રોક્ત સૂરિગુણોની સંપત્તિને ધારણ કરનારા તથા પોતાના શિષ્યગણને શિક્ષણ આપવામાં સાવધાન એવા શ્રી રત્નશેખર પ્રવરગુરૂ અત્યારે પણ જ્યવંત વર્તે છે. શ્રી ઉદયનંદી-સૂરિ શ્રી સંઘપર સદા પ્રસન્ન રહો. જેમની અસાધારણ નિરીહતા અદ્યાપિ જેવામાં આવે છે. અન્ય સમાન ગુરૂભાઈઓનું ઉદ્ધવન કરીને જેમનાપર શ્રી ગુરૂનો પ્રસાદ અધિક થયો—એવા શ્રી લક્ષ્મી-સાગરસૂરિવર તમારી સિદ્ધિને અર્થે થાઓ. ચોથા યુગમાં પણ જેમનું સૌભાગ્ય શ્રી વજ્રસ્વામીના જેવું હતું—એવા શ્રી સોમદેવ-સૂરિ તમને જય આપનારા થાઓ. એ તથા અન્ય આચાર્યો, વાચકો, વિબુધો, સ્થવિરો તદા ઇતર સાધુઓ પણ જ્યવંત વર્તે, જેમનામાં વિનય પ્રસુખ અસંખ્ય ગુણો સદા વિદ્યમાન હોય છે. વળી અતિ વિષમ ગ્રંથાર્થને દીપિકાની જેમ મનોમંદિરમાં સાક્ષાત્કાર કરાવનારી, સર્વદા જાગ્રત અને સર્વને ઉપયોગી એવી અનુત્તર બુદ્ધિને ધારણ કરનારા તથા અદ્યાપિ મુગ્ધ જનોના દુષ્ટ તિમિરને છેદનાર એવા દાનપ્રદીપ ગ્રંથના રચનાર તથા વાચકેન્દ્ર એવા શ્રી ચારિત્ર રત્ન મારા ગુરૂ જ્યવંત વર્તે, જેમણે ભણાવેલા કુશળ શિષ્યો જગતપર અનેક ઉપકારો કરે છે. તેમના ગુરૂભાઈ સમસ્ત સુજ્ઞાને માનનીય તથા પૂજનીય એવા ઉદયશેખર પંડિત-વર જ્યવંત રહો. જેમણે પોતાના પવિત્ર અને દેદીપ્યમાન તેજ (વચન) થી અંતરમાં અત્યંત વૃદ્ધિ પામેલી એવી મારી જડતાને પણ હૂર કરી. તેમના (ચારિત્રરત્ન તથા ઉદયશેખરના) ચરણ કમળમાં મધુકરસમાન એવા પંડિત સોમધર્મગણિ શિષ્ય થયા, જે ઘણાં શાસ્ત્રો ભણ્યા, પણ તેના મર્મને જાણી ન શક્યા. તેમણે (૧૫૦૩) ના વર્ષે આ મનોહર ઉપદેશસમૃદ્ધિના નામે ગ્રંથ રચ્યો, જે બુદ્ધ જનોને કૃતાર્થ કરવા લાયક છે. આ અદ્ય

પણ પોતાના હસ્તગત પ્રતીઓમાં રાખવી, પણ અન્ય પુસ્તકોમાં એને કદાપિ જતી ન કરવી. કારણકે નગરના મધ્યમાં આવેલી તેજ શ્રેષ્ઠ પ્રપા (પરળ) કહેવાય, કે જેમાં લોકો પોતાની ઇચ્છા પ્રમાણે જળપાન કરે. વિશુદ્ધ બુદ્ધિવાળા એવા શ્રી સોમધર્મગણિએ કલિંદિકામાં સદોષપોષા છતાં (સજ્જનોના સમૂહને હર્ષ આપનારી) સતીની જેમ દૂષણરહિત એવી આ ઉપદેશસમૃતિની રચના કરી.

યાવદ્વીરજિનેંદ્રશાસનમિદં દુર્વાદિનિર્નાશનં,

ભાવાર્થ—જ્યાં સુધી દુર્વાદીના ગર્વને ગાળી નાખનારૂં શ્રી મહાવીર પ્રભુનું શાસન જયવંતું વર્તે છે.

યાવન્મૈરૂમહીધરપ્રભૃતયો ભાવા અમી શાશ્વતાઃ ।

જ્યાંસુધી આ મેરૂ પર્વતાદિક શાશ્વતા પદાર્થોનું અસ્તિત્વ છે.

શ્રી સંઘશ્ચ ચતુર્વિધોઽપિ કુરુતે યાવન્નચ પુણ્યોદ્દમં,

અને જ્યાંસુધી ચતુર્વિધ સંઘ સુકૃત્ય કરવામાં ઉદ્યમ વંત છે.

તાવત્ શ્રી ઉપદેશસમૃતિરિયં શ્રેયસ્કરી સ્તાત્સતામ્ ॥ ૧ ॥

ત્યાંસુધી આ સદ્બોધદાયી ઉપદેશ સમૃતિકા લબ્યાત્માઓને કલ્યાણ કરનારી થાઓ !



